विवाह-कुसुम

मूल लेखक—

श्रीचारुचन्द्र वन्द्योपाध्याय

हिन्दी ग्रंथ मंदिर की प्रथम प्रतिमा।

विवाह कुसुम।

एक शिक्षाप्रद रोचक उपन्यास

[स्वतन्त्र अनुवाद]

मूल लेखक—

श्रीचारुचन्द्र वन्द्योपाध्याय।

अनुवादक—

श्रीप्रकाशचन्द्र सेठी।

प्रकाशक—

कृष्णलाल गुप्त,

हिन्दी ग्रंथ मन्दिर, चंदवासा,

इन्दौर स्टेट।

प्रथम संस्करण] अप्रैल १९२३ [मूल्य १॥)
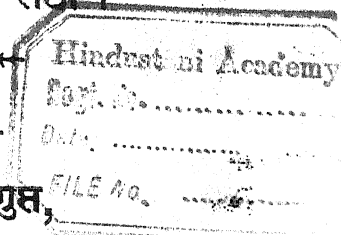
समर्पण

परम प्रिय

श्रीमान्

विजयचन्द्रजी जैन

को

अनुवादक

की ओर से

सप्रेम

समर्पित।

अनुवादक।
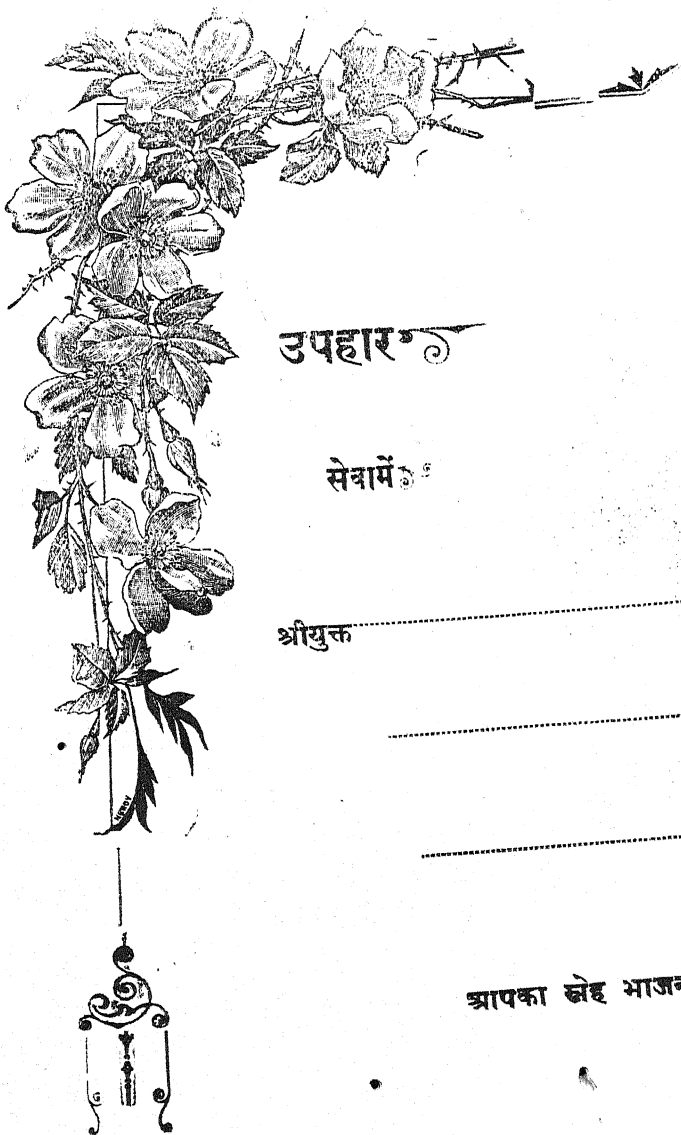
उपहार

सेवामें

श्रीयुक्त ....

....

....

आपका स्नेह भाजन—

अनुवादक का निवेदन ।

मैं, हिन्दी संसार के सम्मुख, एक बंगाली उपन्यास का अनुवाद लेकर उपस्थित हुआ हूँ। यह मेरा प्रथम ही प्रयास है; एतदर्थ भाषा में अशुद्धियों का रह जाना स्वाभाविक है; तोभी इस अनुवाद में मुझे कहाँ तक सफलता मिली है; यह पाठक स्वयं समझ सकते हैं।

इस उपन्यास में मानव-प्रकृति का आदर्श-चित्र खींचा गया है। इसमें माता और पुत्र का, पति और पत्नी का, स्वामी और सेवक का, पारस्परिक प्रेम सम्बन्ध देखने योग्य है। इसे पढ़ते हुए पाठक दुरंगी दुनियाँ पर दो आँसू बहावेंगे और साथ ही उस पर करुणा और सहानुभूति भी प्रकट करेंगे।

मैंने मूल पुस्तक के भावों को यथासाध्य बनाये रखने का प्रयत्न किया है; इतने पर भी यदि कहीं गड़बड़ी रह गई हो, तो साहित्यज्ञ मुझे क्षमा करें। एवं भविष्यत के लिये मुझे सावधान कर दें।

अन्त में मैं इस पुस्तक के मूल लेखक श्री चारुचन्द्र बन्धोपाध्याय का बड़ा कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने कृपा करके मुझे इस पुस्तक के अनुवाद करने की आज्ञा प्रदत्त की।

अजमेर,
ता० १-२-२३।

श्रीप्रकाशचन्द्र सेठी।

प्रकाशक का निवेदन ।

भाव-पूर्ण उपन्यासों के पढ़ने से, चरित्र पर भारी प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार उत्तम कोटि के उपन्यास, मनुष्य चरित्र को आदर्श बना देते हैं; ठीक उसके विरुद्ध; रद्दी उपन्यास मानव चरित्र को घृणित बना सकते हैं। एतदर्थ उपन्यास-प्रेमी पाठकों को उपन्यास खरीदते समय बहुत सावधानी रखना चाहिये।

प्रस्तुत पुस्तक बंगला के एक प्रसिद्ध भावपूर्ण उपन्यास का अनुवाद है। लेखक ने जिस खूबी से पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है, वह देखते ही बनता है, एक बार हाथ में लेकर समाप्त किये बिना रखने को जी नहीं चाहता। हमारे सहृदय पाठक, पढ़ कर स्वयं जान लेंगे, कि हमारा कथन कहाँ तक सत्य है; यदि यह पुस्तक पाठकों को पसंद आई; तो मैं शीघ्र ही दूसरी पुस्तक लेकर सेवा में उपस्थित होऊँगा।

विनीत—

कृष्णलाल गुप्त।

काशी,
होली २-३-२३।

आभार प्रदर्शन ।

हमारे सुहृद् मित्र, श्रीयुत चन्द्रराजजी भण्डारी विशारद ने; स्वास्थ्य के अस्वस्थ होते हुए भी, इस पुस्तक की भूमिका लिखने का कष्ट उठाया; तथा श्रीयुत जीतमलजी लूणिया व हमारे उपरोक्त मित्र से इस पुस्तक के प्रकाशित करने में कई तरह की सहायताएं प्राप्त हुई। एतदर्थ मैं दोनों सज्जनों का बहुत कृतज्ञ हूँ।

प्रकाशक—

भूमिका ।

—*—

प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी का मौलिक ग्रन्थ नहीं। यह एक बंगाली उपन्यास का अनुवाद है। इसके मूल लेखक हैं; श्री-चारुचन्द्र वन्द्योपाध्याय। आपके लिखे हुए और भी कई ग्रन्थ-कुसुम; बँगला साहित्योद्यान में शोभा पा रहे हैं। आपकी पुस्तक के विषय में कुछ समालोचना करना अनाधिकार चेष्टा है। फिर भी प्रकाशक महाशय का—जो कि, मेरे एक सुहृद् मित्र हैं—अनुरोध है कि, मैं इसके विषय में कुछ लिखूँ।

मैं उपन्यास तत्व का ज्ञाता नहीं। उपन्यास मेरा प्रधान बिषय भी नहीं। फिर भी जहाँ तक मेरा अनुभव है, चरित्र-चित्रण की स्वाभाविकता, और सुन्दरता ही उपन्यास का मुख्य सौन्दर्य्य है। सूज्ञ लेखक; अपने पात्रों को बना गढ़ा कर जितना ही अधिक स्वाभाविक और सुन्दर बना सकता है, उपन्यास उतना ही अधिक उच्च श्रेणी का होता है। उपन्यास पढ़ कर यदि पाठक को यह भाव होने लगे कि, मैं मृत्यलोक की नहीं; प्रत्युत स्वर्गलोक की सैर कर रहा हूँ। तो वह उपन्यास सुन्दर अवश्य हो जाता है, पर प्रकृत नहीं। प्रकृत उपन्यासों की सामग्री तो इसी मृत्यलोक के पाप पुण्यमय

कार्य्यालय से ही संगृहीत की जाती है; और आधुनिक संसार के विद्वान आदर्श (Ideal) की अपेक्षा प्रकृत (Real) उपन्यासों को ही अधिक महत्व देते हैं। अब हमें देखना है कि, प्रस्तुत उपन्यास किस श्रेणी में रक्खा जा सकता है।

इस उपन्यास के मुख्य पात्रों में हम "हीरक, रमा, सेवा, सुमति, लोकनाथ, कुमुद" आदि का नाम ले सकते हैं। इन सभी पात्रों के चित्रों को लेखक ने खूब ही मांज मूंज कर साफ़ करने की चेष्टा की है। उन्होंने इस बात की भी कोशिश की है कि, चित्र अत्यन्त उज्वल होने पर भी मृर्त्यलोक से बाहर न निकलने पावें। फिर भी हमें वाध्य होकर स्वीकार करना ही पड़ता है कि, कहीं २ पर लेखक की सुन्दर लेखनी चित्रों को अधिकाधिक सुन्दर बनाने की धुन में मृत्युलोक से कुछ ऊपर को अग्रसर हो ही गई है। हमारे इस कथन की सत्यता पाठकों को ध्यान पूर्वक उपन्यास पढ़ने पर मालूम हो जायगी।

उपन्यास में प्रवेश करते ही हमें सत्रह अट्ठारह वर्ष की तरुण बालिका "सेवा" से परिचय होता है। उसका हृदय शिशु की हंसी से भी अधिक सरल, प्रातःकाल के खिले हुए कमल से भी अधिक सुन्दर; और माता के स्नेह से भी अधिक पवित्र है। पाप की परछांही से कोसों दूर उसके अनिंद्य सौन्दर्य्य को देख कर; हृदय तंत्री में पवित्रता के तार झनझना उठते हैं। उस मातृ पितृ हीन बालिका को देखते ही हमारे हृदय में बलात्कार एक सहानुभूति की लहर का संचार

हो आता है। यह बालिका फूलों से बहुत प्रेम करती है; फूल ही उसका जीवन है, फूल ही उसका सर्वस्व है; फूल ही उसका भविष्य है। इस सरल हृदया देवी के अनिंद्य सौन्दर्य्य के सम्मुख सरलता भी नतमस्तक होकर प्रणाम करती है।

इस ईश्वरीय सृष्टि में अनेक पदार्थ सुन्दर हैं। चन्द्र सुन्दर है, पवित्र धारा के साथ कल २ नाद कर बहती हुई सरिता भी सुन्दर है। प्रातःकाल के खिले हुए कमल पर जमे हुए ओस के बिन्दु भी सुन्दर हैं। तोते के मुख से निरा कपट भाव से निकलता हुआ "राम, राम" शब्द भी अत्यंन्त सुन्दर है। पर सांसारिक मायाजाल के एक भी तंतु से रहित, पाप-पंक की एक छींट से भी मुक्त रमणी के शुद्ध, और सरल हृदय की अनिंध सुन्दरता के सम्मुख ये सभी सौन्दर्य्य फीके पड़ जाते हैं। उस सौन्दर्य्य का उपमान संसार में कोई है; या नहीं, सो नहीं मालूम।

सेवा अपने परमप्रिय पोधों को सींच रही है। इतने ही में सत्तर वर्ष के बुड्ढे आनन्द बाबू उसे देखते हैं। उस पवित्र देवी-सौन्दर्य्य को देखते ही, वे भी मुग्ध हो जाते हैं। मज़बूर होकर उन्हें अपनी किताब बन्द करदेना पड़ती है। वे कहते हैं; शकुन्तला वृक्ष सींच रही है क्या? उनके इस कथन में जो भाव गाम्भीर्य्य; और मुग्ध विस्मय देख पड़ता है; वह बहुत ही गहन है। इस वाक्य से आगे बढ़ने के पूर्व ही हमारा हृदय प्रश्न कर उठता है—"भगवन्! इस शकुन्तला को भी क्या योग्य

दुष्यंत प्राप्त होगा ?" आगे बढ़ कर आनन्द बाबू कहते हैं "पर यह शकुन्तला तो केवल बेगार ही काट रही है। उसे तो किसी दुष्यंत ने आकर एक बार भी नहीं देखा ?"

सहसा जलद गम्भीर ध्वनि होती है। सरल हृदय का स्फोट फूट उठता है। सेवा कहती है "क्या जरूरत है ? उस दुष्यंत की ? जिसने शकुन्तला से विवाह करके भी उसका अपमान किया।"

यह हृदय स्फोट सेवा का है; या उपन्यासकार का, सो तो हमें नहीं मालूम। पर इतना अवश्य है कि, यह स्फोट हृदय का स्फोट है। ये भाव निर्जीव लेखनी के नहीं; बल्कि सजीव हृदय के हैं। मैं इस सारे उपन्यास में इस एक वाक्य को बहुत महत्व देता हूँ। इस एक ही वाक्य में बहुत ही उत्तम ढंग से लेखक ने हमारे समाज के पतन का एक सजीव दृश्य अंकित कर दिया है।

इस अभागे देश के पतन के अनेक कारणों में से एक कारण यह भी है कि, इस देश के अन्दर स्त्रियों के हक़ जिस निर्दयता के साथ कुचले गये हैं; उतने किसी भी सभ्य देश में न कुलले गये होंगे, हम स्त्रियों की स्वाधीनता के पक्षपाती नहीं, हम यह भी स्वीकार करते हैं कि, स्त्री जाति को पुरुषों के आधीन होकर ही रहना पड़ेगा, हम यह भी जानते हैं कि; पुरुष के चरित्र की अपेक्षा स्त्री का चरित्र बहुत अधिक उज्वल होना चाहिए। लेकिन इसके साथ २ हम यह भी मानते हैं; कि

स्त्री जाति का एक स्वतंत्र अस्तित्व है। शारीरिक बल और मानसिक व्यापार में यदि पुरुष स्त्री जाति से अधिक प्रबल होते हैं, तो सेवा और सहनशीलता में, स्नेह और स्वार्थत्याग में; नारीजाति पुरुषों की अपेक्षा भी कई दर्जे बढ़कर होती है। पुरुषों की अपेक्षा दुर्बल होने के कारण ही, हमारे देश के पुरुषों ने इस जाति के स्वाभाविक अधिकारों पर भी बुरी तरह से कुठाराघात किया है। इसके प्रत्यक्ष उदाहरणों में हम सीता, द्रौपदी और शकुन्तला के नाम ले सकते हैं।

जिस सीता ने आजीवन पर्यंत रामचद्र को अपना इष्ट-देवता समझा। जिस सीता ने अशोक-वाटिका के समान भयंकर स्थान में भी एक क्षण के लिये रामचंद्र को नहीं भूला। जिस सीता ने अपना सारा वर्तमान और भविष्यत् निष्कपट भाव से रामचन्द्र में लीन कर दिया। और जिस सीता को स्वयं रामचन्द्र भी "देवी" शब्द से सम्बोधित करते थे। उसी निरपराधिनी, विश्वास करनेवाली, पवित्रता की प्रतिमूर्ति सीता को केवल एक धोबी के कथनमात्र से बिना समझे, बिना विचार किये मर्यादा पुरुषोत्तम रामचंद्र ने बनवास को भेज दिया। इसमें सन्देह नहीं कि, इस बात से उन्हें स्वयं अत्यंत दुःख हुआ। पर दुःख होने ही से किया हुआ अन्याय; न्याय नहीं हो सकता।

रामायण के काल से हटकर, जब हम महाभारत के काल में आते हैं; तो हमें इससे भी अधिक बीभत्स दृश्य देखने को

मिलता है। सती-साध्वी, सरलहृदया द्रौपदी को हम भरी राज्य सभा में धर्मराज (?) युधिष्ठिर के हाथ से जुए में हारती हुई देखते हैं। मानो स्त्री घर की कोई सम्पत्ति है। अधःपात की चरम सीमा है।

यही हाल दुष्यंत और शकुन्तला का भी है। एक भोली-भाली बालिका को तपोवन में जाकर—नाना प्रलोभन देकर—उसे धर्म भ्रष्ट कर देना; (महाभारत के अनुसार) और उसके पश्चात् उसे त्याग देना; यह कार्य भी दुष्यंत के समान नरपति से हुआ था।

अस्तु। कहने का मतलब यह है कि, इस देशके पतन के अनेक कारणों में एक प्रधान कारण यह भी है; और उपरोक्त वाक्य में लेखक ने व्यंग की तौर पर इसे अंकित कर दिया है।

आगे चलकर हम "सेवा" को उस स्थान पर देखते हैं; जहां पर आनन्द बाबू उसे हीरक की सेवा करने के लिए चलने को कह रहे हैं। "सेवा" सेवा करना चाहती है। उसका स्वभाव ही सेवामय है; पर अभी तक उसे कोई ऐसा पात्र नहीं मिला जो उसकी सेवा को ग्रहण करे। आनन्द बाबू; उसी प्रकार के एक पात्र को खोज लाये हैं। यह जानकर सेवा को बड़ा आल्हाद हुआ। पर जब उसे यह मालूम होता है कि, वह व्यक्ति एक धनाढ्य पुरुष है, तब वह कुछ असमंजस में पड़ जाती है। उसके हृदय में एक प्रकार के युद्ध का आरम्भ हो जाता है; और जब उसे आनन्द बाबू यह कहते हैं कि, "बेटी।

सेवा करने का मूल्य तुम्हे लेना ही होगा" तब वह और भी अधिक असमंजस में पड़ जाती है।

सेवा करने का बदला क्या धन से चुकाया जाता है ? वे लोग भूलते हैं, जो सेवा और धन को एक तराजू में तौलते हैं सेवा का मूल्य धन नहीं हो सकता। उसका मूल्य तो हृदय का आशीर्वाद ही है। वह आशीर्वाद; जो मुख से निकलते समय रोगी के मुखपर भी एक क्षीण हंसी की रेखा पैदा कर देता है, वह आशीर्वाद; जो कृतज्ञता के रुदन से भी अधिक पवित्र, विश्वास के आंसू से भी अधिक स्वच्छ, और प्रेम की प्यास से भी अधिक मधुर होता है। जिस पर अभिमान का आतंक नहीं है, उससे कभी धन की समता नहीं की जा सकती।

कृतघ्नता की परछाहीं नहीं है, अविश्वास की धूप नहीं है, वही आशीर्वाद सेवा का वास्तविक बदला है। जो सेवा धन के बदले में की जाती है; वह तो एक प्रकार की मजदूरी है। उसमें हृदय का अंश नहीं रहता।

अस्तु; इतने पर भी आनन्द बाबू की आज्ञा को शिरोधार्य्य कर वह हीरक के घर जाती है। वहां पर इसका जीवन अनेक घात प्रतिघातों के धक्के सहता हुआ अग्रसर होता है। और अन्त में यह कुशल नारी; हीरक के एक पत्नी-वृत हो नष्ट करने में समर्थ होती है। इसके चरित्र को लेखक ने आदि से अन्त तक स्फटिक की तरह स्वच्छ रक्खा है। मानवीकृत दुर्बलता की कहीं पर भी स्पष्ट झलक न होने के कारण

इसका चरित्र मर्त्यलोक सम्भव स्त्रियों से कुछ ऊपर को अग्रसर हो गया है।

"विवाहकुसुम" का हीरक एक शुद्धचरित्र, दृढ़ पत्नी वृत एवं परम प्रजा हितैषी युवक है। इस संसार में एक मात्र 'रमा' को ही अपनी प्रेम पात्री समझता है। रमा ही उसके जीवन का सर्वस्व है। रमा ही उसके इहकाल का सुख; और परकाल का प्रकाश है। सूज्ञ लेखक ने इस प्रेमी युगल के प्रेम का बहुत ही उज्वल चित्र अंकित किया है।

कुछ दिनों के पश्चात् हीरक आज अपने घर आ रहा है। माता का हृदय अपने लाड़ले पुत्र का आगमन सुनकर ललक रहा है। वह उसके लिये तरह २ के पकवान बना रही है। इतने ही में हीरक आता है, उसे देखते ही उसकी माता और स्त्री का हृदय प्रसन्नता से भर जाता है। इसके पश्चात् उनके आपस में नाना प्रकार की हँसी होती है। यह हँसी यद्यपि बहुत ही मीठी और पवित्र है। फिर भी हमारे हिन्दू समाज में माता के सम्मुख पति और पत्नी का इस प्रकार हँसी करना बिलकुल अस्वाभाविक समझा जाता है। सम्भव है; बंगाली समाज में यह हँसी स्वाभाविकतयः होती हो। अच्छा होता यदि अनुवादक महाशय इस हँसी को बदल देने या निकाल देने की कोशिश करते।

क्रमशः रात होती है। सूर्य्यदेव प्रेमी जनों को परस्पर मिलने की आज्ञा देकर स्वयं भी अपनी प्रेयसी के पास दौड़

जाते हैं। रमा का हृदय भी अपने जीवन सर्वस्व से मिलने के लिए व्यग्र हो उठता है। वह कमरे में जाती है, देखती है हीरक अपने प्राप्त किये हुये मेडलों की माला बना रहा है। वह उसके कन्धे पर भार देकर खड़ी हो जाती है। हीरक अपने मेडलों की माला उनके गले में डाल देता है। दोनों के मुख प्रेमावेश से उज्वल हो जाते हैं।

इतने ही में हीरक को अपना कर्तव्य स्मरण हो आता है! यदि आज ही रातको या कलही प्रातःकाल कोई उचित प्रबंध न हुआ तो "पाथर गोला" ग्राम के बह जाने का भय है। वह एक दम चौंक उठता है; प्रेम कर्तव्य में बदल जाता है। कहता है "रमा आज रात भर के लिये मुझे छुट्टी दो।"

बिलकुल ठीक है। वास्तविक प्रेम इसी का नाम है। वह प्रेम जो कर्तव्यज्ञान से शून्य होता है। वह प्रेम तो लालसा से परिपूर्ण होता है; वह प्रेम तो अपने सुख के सिवाय दूसरे की पर्वाह नहीं करता, वह प्रेम तो कर्तव्य से डरता है, उपकार से घृणा करता है, अन्याय को गले लगाता है। सच्चा प्रेम नहीं है। वह मोह का एक उद्दाम उच्छ्वास है, जो मनुष्य को पिशाच बना देता है। वास्तविक प्रेम वही है जो कर्तव्यज्ञान से भय नहीं खाता; बल्कि उसे गले लगाता है, इसके मृदुल स्पर्श से लालसा भी चमक उठती है, वीभत्स काम भी सुन्दर हो जाता है। इस प्रेम के सम्मुख भक्ति घुटने टेककर प्रणाम करती है, विश्वास इसके सिरपर पवित्रता का मुकुटमण्डित करता है।

इसी प्रेम का उज्वल चित्र लेखक ने यहाँ पर खींचा है। यदि हीरक पत्नी-प्रेम के बन्धन में पड़कर विश्वप्रेम को लात मार देता, तो यह सुन्दर पत्नी-प्रेम भी वीभत्स काम का प्रतिरूप होजाता; यह स्वर्गीय प्रेम एक नरक का नमूना बन जाता।

आगे चलकर जब दैव दुर्योग से रमा की मृत्यु हो जाती है, हीरक दुःसाध्य रूप से घायल हो जाता है। उसके पश्चात् लेखक ने हीरक का जो चित्र अंकित किया है, वह पूर्ण स्वाभाविक और सुन्दर है। कई दिनोंतक हीरक रमा को नहीं भूलता है। लोकनाथ का आश्वासन, सेवा का मृदु सम्भाषण भी उस हृदय पर चित्रित रमा की सुन्दर मूर्ति को नहीं मिटा सकता है। जहाँतक साध्य होता है; वहाँतक वह उस दिव्य स्मृति को हृदय पट पर अंकित रखने की कोशिश करता है।

पर हीरक देवलोक का प्राणी तो था ही नहीं। वह तो था आखिर इसी मर्त्यलोक का एक प्राणी। मानव सुलभ दुर्बलता का होना उसमें अनिवार्य ही था। जहाँतक एक मनुष्य कमजोरी को दबाने का प्रयत्न कर सकता है; वहाँतक उसने किया, पर अन्तमें संसार के इस घूमते हुए चक्र में; विस्मृति के इस लहराते हुए सागर में; वह स्मृति कहाँतक स्थिर रह सकती है। एकाएक उस स्मृति की बहती हुई छोटी सी धारा में "सेवा" की सेवा का एक तूफान उठता है, उस निर्मल धारा का अस्तित्व उस तूफान में लीन हो जाता है, सेवा रमा के अधिकार को ग्रहण कर लेती है।

इतने पर भी "हीरक" मर्त्यलोक के साधारण जीवों की अपेक्षा कुछ उच्च श्रेणी का था। सेवा को उसने ग्रहण किया। लेकिन किया केवल इसलिये कि, जिससे रमा की स्वर्गीय आत्मा को शान्ति मिले। उसने सेवारूपी सुन्दर पुष्प को ग्रहण किया, लेकिन किया केवल इसलिये कि, उससे रमारूपी देवता की अर्चना की जाय। बड़ा सुन्दर दृश्य है।

सुमति, रमा, और लोकनाथ के चित्र भी बड़े ही सुन्दर हैं। बहुत सुन्दर होने के कारण इनमें स्वाभाविकता की मात्रा कुछ कम हो गई। लक्ष्मी के समान माता हर एक को नहीं मिल सकती। रमा के समान पत्नी बहुत बड़ी तपस्या के फल स्वरूप प्राप्त हो सकती है; और लोकनाथ के समान भृत्य भी बिरले ही नज़र आते हैं; ये चरित्र बहुत सुन्दर हैं—आदर्शवाद की दृष्टि से ये बहुत महत्व के हैं। पर प्रकृत वादिता की दृष्टि से इनमें कुछ कमियां भी हैं। ये कुसुम मृत्युलोक के जंगलों के नही है। ये स्वर्गीय नन्दन कानन के पारिजात हैं। ये चित्र मृत्यलोक के नहीं, स्वर्गलोक के हैं।

इरादा तो एक लम्बी भूमिका लिखने का था। पर उसमें दो बाधाएँ आकर उपस्थित हो गईं। एक तो स्वास्थ्य की अत्यन्त कमजोरी; और दूसरे हमारे प्रकाशक महाशय की अत्यन्त शीघ्रता। यही कारण है कि, इसके लिए इतने ही में हमें सन्तोष करना पड़ा।

विनीत—

अजमेर,
होली सम्वत् १९७९

चन्द्रराज भण्डारी।
"विशारद"

पुस्तक-प्रेमियों के

हित की बात ।

आठ आना प्रवेश फीस देकर

स्थायी ग्राहक हो जाने से

ग्रंथमाला से प्रकाशित सभी

पुस्तकें

पौने मूल्य पर मिलेंगी

तथा

बाहरी पुस्तकों पर भी

उचित कमीशन

दिया जावेगा ।

विवाह कुसुम ।

पहला परिच्छेद ।

Praise of that affectionate love,
Beneath whose watchful eye the maiden gread.
Pious and pure and yet so brave,
Though young so wise though meak so resolute.
"*Wordsworth*".

परिचय ।

कलकत्ते की एक तंग गली के भीतर एक छोटे मकान में एक छोटीसी छत है। इस छत पर गमलों में कुछ फूलों के पौधे हैं। फूलों से ढके हुए वे पौधे खुश होकर ऊपर के विस्तृत नीले आकाश को एक टक देख रहे हैं। इस छत पर हवा और प्रकाश अच्छी तरह से नहीं पहुँच पाते। नशे में झूमते हुए आदमी की तरह हवा भी चारों ओर की ऊँची ऊँची अटारियों से टक्करें लेती हुई आकर कभी कभी उन हँसते हुए फूलों के प्रति अपना आदर एवं अनुराग जता जाती है सूर्य भी ठीक दोपहर को कुछ देर के लिये उनसे मुलाकात कर जाता है। पौधे भी उनकी इस कृपा से अनुग्रहीत होकर फूले नहीं समाते; अपनी मन्द सुगन्धि को फैलाकर मुस्कुराते हुए वे हवा और सूर्य का स्वागत करते हैं।

ज्वर पीड़ित, अनाथ, असहाय बालक, भूखे मरते हुए भी अपने किसी पड़ोसी से प्रेम या खिलौना पाकर जिस प्रकार अपने दारुण दुःख को भूल जाते हैं, उसी प्रकार ये पौधे भी अपनी माता पृथ्वी की छाती से अलग रहकर, अपने पिता आकाश के स्नेह से, और अपने भाई वायु के सहवास सुख से वञ्चित रहने पर भी अपनी धात्री की प्रेममयी शुश्रूषा से बड़े प्रसन्न एवं फूले रहते थे। जिस युवती की शुश्रूषा से ये पौधे अपने सब दुःखों को भूल कर खुशी खुशी फूल रहे थे, वह भी इन्हीं पौधों की तरह अनाथ थी। उसके भी न माता न पिता थे, न कोई रिश्तेदार ही था। यह मकान उसने किराये पर ले रक्खा था। उसका नाम सेवा था। वह सुन्दरी थी। केवल सत्रह अठारह बसन्त उसने देखे थे। उसके अंगोपांग का संगठन ऐसा था मानों वे साँचे में ढले हुए हों। उसके चेहरे पर एक अपूर्व तेज था। वह हमेशा प्रसन्न रहती थी। उसे तरह तरह के रंग बिरंगे फूलों, एवं पुष्प-वृक्षों से बड़ी प्रीति थी, इसीलिये यहाँ पर उसने कुछ पौधे लगा रक्खे थे। परन्तु इस छोटीसी छत पर उसकी इच्छा न भरती थी। उसने किसी पुस्तक में पढ़ा था कि विलायत में छतोंपर लोगों ने बाग़ीचे बना रक्खे हैं। यह उसीकी नकल थी। यह छत ही उसकी फुलवाड़ी थी।

अपनी फुलवारी को वह सुंदर बनाना चाहती थी। इस छत पर अपनी इच्छा पूर्ण होने की उसे सम्भावना न थी। वह मेरठ में पैदा हुई थी, और कोटा में पाली गई थी। उसके पूर्वज कहाँ के निवासी थे यह तक वह न जानती थी। उसके पिता कहचरी में नौकरी करते थे। बेचारे बड़े ग़रीब थे। मातृहीन और अपने पिता की वह इकलौती बेटी थी। इस

कारण सेवा के लाड़ प्यार में भी कमी नहीं थी। आदर, प्रेम, और बड़े यत्न से पाली हुई लड़की को, अनाथ बनाकर उसका पिता इस संसार से चल बसा। सेवा के पिता स्त्री-शिक्षा के पक्षपाती थे, इसलिये उन्होंने अपनी पुत्री को एक पादरी की दयालु स्त्री के पास रख कर उसे शिक्षा दिलाई थी। पिता के मरने के बाद सेवा कलकत्ते आई और वहाँ एक महिला विद्यालय में अध्यापिका हो गई। वहाँ नौकरी पाकर वह विद्यालय की अधिष्ठात्री के परिचित मित्र आनन्द बाबू के यहाँ एक कोठरी किराये लेकर रहने लगी। इन्हीं आनन्द बाबू के यहाँ उसके भोजनादि का प्रबन्ध भी हो गया। आनन्द बाबू से उसकी अच्छी तरह जान पहचान हो गयी थी। उसने उन्हींकी कृपा से इस छतपर कुछ वृक्ष लगाये थे।

सेवा बचपन से ही मातृहीना थी; उसके पिता तो दफ़्तर चले जाया करते थे, अकेली बच्ची, पड़ोसी माली के घर पर सारा दिन बिताया करती थी। सेवा के पिता इस लिये माली को कुछ इनाम दे देते थे। बचपन से ही बाग़ीचे में रहने के कारण सेवा को फूलों से बहुत प्रेम था। यह प्रेम पीछे जा कर स्वभाव हो गया था। मेरठ से कोटा आ कर भी सेवा ने बाग़ीचे में ही कुछ दिन बिताये। सेवा स्वभाव से ही फुर्तीली, सेवा परायण और दयालु थी। जिस तरह हो सके फलफूलों से लदे हुए तथा वृक्षों से ढके हुए स्थान में ही उसे रहना पसंद था, किन्तु एक सामान्य अध्यापिका बनी रह कर उसकी इच्छा कैसे पूरी हो सकती थी, इस लिये वह चाहती थी कि जैसे तैसे करके डाक्टरी पास कर ले। उसने आनन्द बाबू और स्कूलकी अधिष्ठात्री की सिफ़ारिश से गरमी की छुट्टियों में अस्पताल जाकर डाक्टरी सीखना शुरू कर भी दिया।

जल जिस प्रकार उसमें उत्पन्न होने वाले कमल आदि पत्तों को नहीं भिगो सकता, जिस प्रकार, हंस आदि जल में रहने वाले जीव, उसमें रह कर भी नहीं भीगते, उसी प्रकार कई मनुष्य भी ऐसे होते हैं, जो बचपन से ही दुःख में पलते हैं, परन्तु उसकी परिभाषा भी वे नहीं जानते । सेवा की भी यही प्रकृति थी । वह बचपन से अनाथ और असहाय होकर भी आनन्दमयी, चंचल, एवं वाक्चतुर थी । भाँति भाँति के दुःखों में फंसी रहने पर भी, वह दुःख का नाम न जानती थी।

सेवा विद्यालय से लौट कर अपनी फुलवाड़ी में जल सींच रही थी । रंग विरंगे फूलों की विचित्र बहार ने हज़ारों तिति-लियों का मन मोहित कर लिया था। विरहिणी की प्रणय वेदना के समान, विकसित गुलाबों की गन्ध से पवन सुंगधित हो रही थी । उसके बीच में जल सींचती हुई, सेवा ऐसी जान पड़ती थी मानो वसन्त लक्ष्मी खड़ी हो ।

बूढ़े आनन्द बाबू अपने घर में आरामकुर्सी पर लेटे हुए एक किताब पढ़ रहे थे। भीगी हुई मिट्टी की गन्ध पाकर उन्होंने आराम कुर्सी से उठ कर देखा। कि सेवा फूलों के बन में 'वनदेवी' की तरह, महर्षि कण्व के आश्रम में 'शकु-न्तला' की तरह, तथा फूलों के बोझ से झुकी हुई एक लता के समान झुक कर पोधों की शुश्रूषा कर रही है। इस सुन्दर दृश्य से वृद्ध पुलकित हो गया। उन्होंने पुस्तक में निशान करके उसे बन्द कर दिया और खिड़की के पास जा कर कहा— 'शकुन्तला' पोधे सींच रही है क्या ?

सेवा ने एक बार मस्तक उठाया और मुस्कुराकर कहा हाँ ! आनन्द बाबू की अवस्था इस समय सत्तर वर्ष के ऊपर थी। उनका रङ्ग पका है एवं सिर से लगा कर दाढ़ी तक के सब

बाल पके हुए हैं। उनकी आकृति से तेज मय भाव टपकता है। उनका स्वभाव शान्त तथा कोमल है। वे कुछ कुछ धार्मिक तत्वों के ज्ञाता भी हैं। कलकत्ते के प्रायः सभी संभ्रान्त लोग उन पर भक्ति एवं श्रद्धा रखते हैं। सेवा यहाँ आकर आनन्द बाबू को 'नानाजी' कहा करती है एवं आनन्द बाबू भी इसे अपनी नतिनी से अधिक प्यार करते हैं।

हँसते हुए आनन्द बाबू ने कहा—किन्तु शकुन्तला तो केवल बेगार ही काट रही है; दुष्यन्त ने तो एक बार भी आ कर नहीं झाँका !

सेवा हँसते हुए बोली–क्या जरूरत है दुष्यन्त की ? जिसने शकुन्तला से बिवाह करके भी उसका अपमान किया।

आनन्द बाबू बोले—इस बीसवीं सदी के दुष्यन्त तो पहिले से ज्यादा शूरवीर हो गये हैं।

सेवा ने गम्भीर हो कर कहा—ऐसे झगड़े टंटों से अलग ही रहना चाहिये।

ऐसे कहने से क्या होता है, सेवा। जीवन अनेक विलक्षण घटनाओं के भरा रहता है। जैसे तुम्हारी अवस्था बढ़ती जायगी अपने आप तुम्हें अनुभव हो जायगा। देखो, तुम्हारी इस फुलवाड़ी में कितने रङ्ग बिरंगे फूल खिले हुए हैं। कितनी तितलियाँ अपने रङ्गीन परों से मन को लुभाती हुई, इन फूलों का रस चूस रही हैं। इसी तरह बेटी ! तुम्हारे विवाह का फूल भी खिलेगा। क्या तितलियों के परों की तरह मनुष्यों का हृदय रंगीन नहीं होता ?

सिर हिला कर ज़ोर से उत्तेजित स्वर में सेवा ने कहा—नहीं, नानाजी नहीं—जिसे कमा कर खाना होता है उसके हृदय को रङ्गीन होने का अवसर कहाँ ? विवाहजनित विलास

एवं सुखों की कामना बैठे ठालों को ही होती है, परिश्रमी व्यक्तियों को नहीं।

खिड़की पर हाथ रखकर आनन्द बाबू फिर बोले—"मुझे भय होता है कि तुम्हें या तुम्हारे मन को कोई चुरा न ले जाय?

हँसते हँसते सेवा ने कहा—कौन चोरी करेगा, नानाजी? जब रुक्मिणी-हरण एवं सुभद्रा-हरण आदि हुआ करते थे तब हृदयों में जोश एवं वीरत्व था, आज वह नहीं है। चोरी करने को भी तो साहस एवं उद्योग की आवश्यकता है। मैं इच्छा करने पर भी चुराई नहीं जा सकती। जब तक इस भूमि में आत्म-मर्यादासम्पन्न पुरुषों की कमी है, तब तक मैं भी चोरी नहीं जाऊँगी। अब तो निर्भय हो गये न?

ज़ोर ज़ोर से गर्दन हिला कर आनन्द बाबू बोले—बेटी! तुम्हारी ऐसी रूप राशि को देख कर कैसे निर्भय हो सकता हूँ।

सेवा ने कहा—नानाजी! वृद्धावस्था में भी इतनी लालसा रखना ठीक नहीं।

इतने ही में आनन्द बाबू की स्त्री मोहिनी आकर खड़ी हो गई—

वे बोलीं—सेवा! तुम विवाह क्यों नहीं कर लेती। स्वयंवर ही करलो न?

सेवा बोली—नहीं, मैं ऐसे पुरुष से शादी करूँगी जो मुझे अपनी फुलवाड़ी में रख सकेगा।

तो तू एक माली से न शादी करले? मोहिनी ने हँस कर कहा।

सेवा ने गम्भीर होकर उत्तर दिया—वही तो करूँगी, माली ने ही फूलों से प्रेम करना सिखाया है। अगर कोई

माली, मुझे अपनी फुलवाड़ी में रखेगा, तो मैं उससे ही प्रेम करने का प्रयास करूँगी। रोकते रोकते भी सेवा के मुँह से एक दीर्घ निश्वास निकल पड़ा।

आरब्योपन्यास में जिस प्रकार सुलेमान की मुहर बन्द हाँड़ी में से दैत्य निकला था ठीक उसी प्रकार अनाथा की अतीत स्मृति ने सिर उठाया। मोहिनी एवं आनन्द बाबू यह देख कर बड़े दुःखित हुए।

बात टालते हुए मोहिनी ने कहा—अच्छा माली बहू, अब अपना मालीपन छोड़कर चलो, कुछ खा लो। आज तुमने कब से खाना नहीं खाया? क्या भूख नहीं लगी?

जल की झारी को रखकर सेवा ने कहा—यह आई नानी जी!

मोहिनी एवं वृद्ध महाशय खिड़की पर से हट गये। जाते जाते मोहिनी ने आनन्द बाबू से कहा—बहिन सुमति का पत्र आया है कि हीरू यहाँ शीघ्र ही एक दो दिन में आने वाला है। यहाँ Sports खेलने आएगा।

आनन्द बाबू ने उत्तर दिया—एक आध दफ़ा अपने यहाँ भी आएगा? सेवा से कह कर कुछ खाने पीने को बनवा रखना।

कमरे में घुसते घुसते सेवा ने अपना नाम सुन कर पूछा क्यों नानी जी, किसके लिये खाने को बनाना होगा?

अपनी श्वेत एवं लम्बी दाढ़ी को हिलाते हुए आनन्द बाबू ने कहा—एक हमारे मित्र का लड़का आयगा। वह एक ज़मी-दार है। बड़ा सुशील लड़का है। उसका विवाह अभी थोड़े दिन पहिले ही हो चुका है नहीं तो उसके साथ तुम्हारा विवाह अवश्य करवा देता। वह तुम्हें एक ही क्या—सात फुलवाड़ियाँ देकर भी तुम्हारे प्रेम का भिक्षुक बना रहता।

आनन्द बाबू की एक लड़की मर चुकी थी। उनकी दो

छोटी छोटी लड़कियाँ अपनी नानी के पास रहती थीं। नानी वृद्धा होने के कारण उनकी सँभाल अच्छी तरह नहीं कर सकती थी।। सेवा ने कमरे में आकर देखा कि लड़की अनू के दोनों नथनों से नाक बह रही है, एवं बड़ी लड़की रेणुनू के घाव से पीब बह रही है। छोटी लड़की की नाक साफ करते हुए सेवा बोली—गतस्य शोचना नास्ति, नानाजी! अगर कोई उपयुक्त वर न मिला तो तुम्हारी इस छत को ही वर-माला पहनाया करूँगी।

मोहिनी ने मुस्कुराकर कहा—अच्छा अगर कोई युवा तुम्हारी मनोवाटिका में सुन्दर "विवाह कुसुम" खिला दे तो तुम क्या करोगी?

अभिमान से मुँह फुलाकर दोनों लड़कियों को बाहर ले जाते हुए सेवा ने उच्च स्वर से कहा—ओह! जिसके पास फुल-वाड़ी ही नहीं वह कैसे फूल खिला सकेगा?

मोहिनी ने पुकार कर कहा—तो अब फिर कहाँ चली—भोजन तो कर जाओ?

मुँह फिराकर सेवा ने जाते जाते कहा—रेणू बहिन के घाव में मरहम पट्टी बाँध कर आती हूँ।

दूसरा परिच्छेद ।

Speech in their dumbness, language in thier guestures.

नवग्राम के ज़मादार भारतबाबू, आनन्दबाबू के बड़े मित्र थे। भारत बाबू की मृत्यु के बाद उनकी एकमात्र सन्तान हीरक ही उनकी ज़मीदारी का मालिक हुआ। हीरक की स्नेहमयी मातर का नाम सुमति एवं लावण्यमयी स्त्री का

नाम रमा था। हीरक सच्चरित्र, विद्वान, परोपकारी तथा खुशमिज़ाज युवक था। उसकी अवस्था लगभग २१ या २२ वर्ष की थी। उसकी आकृति शिशु की तरह सुकुमार, स्वभाव चंचल तथा आवेग मय था।

आलस्य उसे छूकर भी नहीं गया था। कालेज में पढ़ने के समय ही से हीरक को दौड़ धूप एवं अन्य शारीरिक खेलों से बड़ी प्रीति थी। वह कुश्ती लड़ना भी अच्छी तरह जानता था। उसकी गोरी दीर्घ देह, व्यायाम तथा अन्य शारीरिक खेलों से सुगठित एवं मनोहर हो गई थी। उसके रमणीय मुख को देखकर सब लोग उसे प्यार करते थे।

वह वार्षिक प्रतियोगिता (yearly sports) में शामिल होकर कलकत्ते गया हुआ था। आज उसके नवग्राम लौटने की खबर है। पुत्र के लिये उसकी माता सुमति, गुझियाँ एवं बालूशाही बना बनाकर रस में डाल रही है एवं उसकी स्त्री रमा सास के पास बैठकर उन्हें मिठाई बनाने में मदद दे रही है।

कार्य्य समाप्त करके सुमति ने एक चाँदी की तश्तरी में दो तीन बालूशाही और दो गुझियां रखकर रमा से कहा—गरमा गरम खाकर तो देखो बेटी कैसी बनी हैं?

रमा का मुख लज्जा से लाल हो गया। उसने संकोच करते हुए कहा—मैं पहिले ही कैसे खा लूँ?

सुमति ने कहा—खा लो—इससे मेरा हीरू भी प्रसन्न होगा खाकर देखो?

रमा ने और लज्जित होकर कहा—आप अपने लिये निकाल कर रख लें, फिर.........।

सुमति ने बाधा देकर कहा—तुम्हें खाने से पाप नहीं लगेगा। खाओ न बेटी।

अधिक जिद् न करके रमा खाने लगी। खाते खाते उसने कहा—मैं सब से पहिले जब विवाहित हो कर यहाँ आई तब मेरी एक बहिन ने मुझे डरा दिया था।

सुमति ने रमा की बात को स्पष्टतया करने के लिये कहा—बेटी ! क्यों डरा दिया था ?

लजाते हुए रमा ने उत्तर दिया—मेरी एक बहिन कहती थी कि "ससुराल तो मौत से भी बढ़कर होती है। ये जो तुम रोती रोती ससुराल जा रही हो, यह रोना कभी नहीं मिटेगा ?"

सुमति ने हँसकर कहा—जान पड़ता है कि तुम्हारी बहिन को उसकी सास बहुत तंग किया करती है। कई औरतें अभिमानिनी एवं नीच होती हैं। वे सोचती नहीं कि एक समय वे भी बहू रह चुकी थीं। वे सास बनकर वधू पर हुक्म चलाना ही जानती हैं। उनसे प्रेम करना नहीं। मैं तुमसे प्रेम करती हूँ, क्योंकि तुम मेरे हीरू की बहू हो। बेटी मैं तुम्हें कैसे दुःख दूँगी, माता की आँखें डबडबा आईं।

रमा अधिक न बोली। माथा नीचा करके फिर चुपचाप खाने लगी। सुमति ने फिर आँसू पोंछकर कहा—हीरू के आने का समय तो चला गया। आज भी नहीं आया, कैसा लापर-वाह लड़का है कि उसने एक पत्र भी नहीं दिया।

स्वामी के न आने की आशंका से रमा का मुख म्लान हो गया—उसकी आँखें भर आईं।

सुमति कटोरदान में मिठाइयाँ रखने लगी। उधर हीरक चुपचाप घर में आया। रमा ने मुख फिराकर स्वामी की ओर देखा, उसकी मुरझी हुई हृदयकली खिल गई। उसने लम्बा घूँघट तान लिया। हीरक ने उसे चुपचाप रहने का इशारा करके धीरे २ जाकर माता की आँखें दोनों हाथों से मूँद ली।

मा अपने पुत्र की आदतों को अच्छी तरह जानती थी। उसने कहा—हीरू कब आया?

हीरक ने मा की आँखों पर से हाथ उठा कर कहा—हीरू के आने का पता पा गई क्या? तुम्हें हीरू को छोड़ कर और कोई तो याद न आया?

लड़के के बचपन से खुश होकर सुमति ने कहा—मेरे हीरू के हाथ को मैं पहिचानती जो हूँ। दूसरे की याद क्यों करने लगी? कलकत्ते से किस गाड़ी से आया। मैं तो गाड़ी भी नहीं भेज सकी, इतनी दूर कैसे चला आया?

हीरक ने कहा—क्यों मा—क्या तुम्हारे हीरू को अभी चलना भी नहीं आया? क्या वह निरा शिशु ही है? स्टेशन से यहाँ तक कोस भर की दूरी भी तो नहीं है। आध घण्टे में पैदल चला आया। ये पैर फिर किस लिये है?

लड़के के पौरुष से प्रसन्न होकर मा ने पूछा—अच्छा Sports खतम हो गई क्या? तू जीता या नहीं?

गर्वित भाव से हीरक ने कहा—जीतूँगा नहीं? यह देखो तमगा मिला है। हीरक ने जेब में से एक छोटे से बक्स को निकाल कर मा को देते हुए कहा—ढक्कन खोल कर देखो।

पुत्र की सफलता से प्रसन्न होकर सुमति बोली—तमगे तो तूने ढेर के ढेर इकट्ठे कर रक्खे हैं, किन्तु इन सबका क्या करेगा? माला गूँथ कर बहू को ही न पहना दे?

हीरक ने फिर कर रमा की ओर देखा—रमा ने उसी समय स्वामी की ओर देखा। इस सुख की प्रफुल्लता को ओठों में छिपा कर हीरक ने फिर मा से कहा—तुम्हारे तो बहू ही बहू की लगी रहती है। तरह तरह के मिष्टान्न बना कर केवल उसे

ही खिलाती हो—और मेरी तो तुम्हें कुछ परवाह ही नहीं है। भूख के मारे पेट में चूहे से कूद रहे हैं।

अकस्मात हीरक रमा के सामने बैठ कर उसकी तश्तरी में से मिठाई उठा उठाकर खाने लगा। रमा ने स्वामी को अपना उच्छिष्ट खाते हुए देखकर धीरे से कहा—यह क्या ?

सुमति ने उठाकर और कुछ मिठाइयाँ उस तश्तरी में डाल दीं और कहने लगी—हीरू, उस बेचारी के मुख का कौर क्यों छीन कर खाता है ? तेरे ही लिये तो मैंने इतनी ढेर की ढेर मिठाइयाँ बना कर रख छोड़ीं हैं। कितना खायगा, खा न ?

हीरक ने हँसते हँसते कहा—क्यों माँ, डाक्टर ने तुम्हें चूल्हे, चक्की आदि से अलग रहने को कहा है ? फिर तुम यह क्या करती हो ? बीमार हो जाओगी न ?

इस बात का उत्तर न देकर सुमति ने कहा—ठीक है, चुपचाप खाये जा, मैं आती हूँ।

उसके बाहर जाते ही हीरक ने रमा के घूँघट को उठा कर कहा—रमा—घूँघट खोलो; बहू—कथा—कहो !

रमाने हीरक के हाथ को अलग कर कहा—ओह ! क्या बालकपन करते हो ? अभी माँ आजाँयगीं न।

आँखें फिरा, एवं मुँह बना कर, माथा हिलाते हिलाते हीरक ने कहा—माँ भी बच्चे के दर्द को समझती है, तभी तो बाहर चली गई !

कुछ देर ही में उन दोनों ने सुमति को पुकारते हुए सुना, कामिनी—दो गिलास जल देजा। हीरक और बहू खाना खा रहे हैं।

रमा चट हाथ पाँव समेट घूँघट तान कर बैठ गई, हीरक ने गम्भीर हो कर एक बड़े कौर को मुख में भर लिया, और

हँसी रोकने की कोशिश करने लगा। सुमति ने कमरे में प्रवेश करके कहा—बहू! इस तरह हाथ पाँव समेट कर बैठे रहने से काम न चलेगा। इस तरह से तो यह भुक्कड़ तुम्हे कुछ भी न खाने देगा। जो कुछ मिले लूटलाट कर खा लो।

ग्रास भरे मुँह से हीरक ने कहा—यह कहने की आवश्यकता नहीं है, जरा, घूँघट उठा कर देखो, क्या जल्दी जल्दी मुँह चल रहा है!

रमाने सास की ओर देख कर चट से हीरक की पीठ में एक चुटकी लेली। हीरक चीख़ उठा—ऊहः!!

चौंक कर सुमति ने कहा—क्यों? क्या हुआ रे?

रमा की ओर तिरछी नज़रों से देखते हुए हीरक ने कहा—चींटी ने काट खाया, माँ।

पुत्र के कपट को न समझ कर सरल भाव से सुमति ने पूछा—कहाँ? कहाँ पर काट खाया?

हीरक ने पीठ दिखा कर कहा—यहाँ।

चकित हो कर सुमति ने पूछा—तूने तो कपड़े पहिन रक्खे हैं? कपड़ों में चिउँटी कहाँ से आई?

रमा हँसी रोकने के लिये खस् खस् करके खाँसने लगी—स्नेहमयी माता से हीरक और झूँठ न बोल सका—रमा की ओर इशारा करते हुए कहा—यह क्या बैठी है?

सुमति ने हँस दिया और मिठाइयाँ उठा कर फिर कटोरदान में भरने लगी। वह जब उन्हें रख रही थी तभी हीरक आ गया था। अतः अर्ध-समाप्त कार्य को समाप्त करके सुमति ने कहा—क्यों बेटा! आनन्द बाबू के यहाँ गया था?

हीरक ने कहा—हाँ गया तो था। पर वे आये नहीं। उनके

यहाँ एक लड़की और रहती है, वेही उसका ख़र्च चलाते हैं। वह लड़की एक महिला विद्यालय में पढ़ाती है।

सुमति ने पूछा क्या उसे देखा था? क्या नाम है? कैसी है? कितनी बड़ी है?

हीरक ने कहा—मैंने तो नहीं देखा। लड़की तो बहुत अच्छी बताते हैं। उसका नाम सेवा है। उम्र अभी केवल सत्रह अठारह वर्ष की है। बाबाजी और बड़ी माँ तो उसकी बड़ाई करते करते पागल हो रहे थे। मैं गया तब तो वह स्कूल में गई हुई थी।

माँ ने पूछा लड़की का विवाह भी हुआ है या नहीं?

हीरक ने उत्तर दिया—जान पड़ता है कि अभी तक तो उसका विवाह नहीं हुआ। क्योंकि आनन्द बाबू कह रहे थे कि अगर मेरा विवाह न हुआ होता, तो वे उससे मेरी शादी करवा देते। हीरक ने फिर, एक बार रमा की ओर देखा। माँने पूछा—उसके कोई सम्बन्धी हैं या नहीं? उसका ख़ास घर कहाँ है?

हीरक ने कहा—यह तो मालूम नहीं, अब कभी जाऊँगा तो पूछ आऊँगा।

हीरक की बातें सुन कर माँ हँस पड़ी। घूँघट में रमा भी हँस रही थी।

इसी समय हीरक के विश्वस्त एवं हितैषी, सेवापरायण भृत्य लोकनाथ ने आकर कहा—मैनेजर बाबू आये हुए हैं। आप से एक बार जल्दी मिलना चाहते हैं।

हीरक ने कहा—बैठाओ उन्हें! मैं आता हूँ।

तीसरा परिच्छेद।

उपाय सन्धान।

O world as God has made it, all is beauty,
And knowing this, is love and love is duty,

हीरक अपने कमरे में बैठा हुआ आजतक के सब इनाम में मिले हुए तमगों की एक माला बना रहा था। रमा कमरे में आई एवं अपने स्वामी को अपने लिये माला बनाते देखकर चुपचाप खड़ी रही। माला बना चुकने के बाद हीरकने अपना मुँह उठाकर देखा। रमा अपने बायें हाथ से अपने शरीर का भार उसके कन्धे पर डालती हुई बोली—यह क्या हो रहा है? रमाको देखकर हँसते हुए हीरक ने कहा—मैं माँ की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ।

हीरक ने एक यंत्र से माला के दोनों मुखों को मिलाकर उस माला को रमा के गले में डाल दिया। प्रेमावेश से दोनों के मुख उज्ज्वल हो गये, रमा ने कोकिल कूजित स्वर से कहा—जाऊँ! मा को भी बता आऊँ।

माथा हिलाकर हीरक ने कहा—यह क्या? केवल उपहार ले जाने से ही क्या होगा—कुछ देती भी तो जाओ?

रमाने मुस्कुराकर कहा—क्या चाहिये? बोलो झटपट।

हीरक बोला—छुट्टी! स्वामी के तात्पर्य को न समझ कर रमा बोली—छुट्टी? कैसी छुट्टी? हीरक ने नम्रस्वर से कहा—आज रात की छुट्टी दो, रमा! मुझे कई जरूरी कार्य करने हैं।

हीरक के काम करने का अर्थ ज़मीदारी के काम करने से है, यह रमा जानती थी। उसने मुँह फुलाकर कहा—चार दिन

पीछे तो घूमघाम कर कलकत्ते से आये हो क्या फिर भी पेट नहीं भरा ? तुम्हें रातभर न जागना होगा, बस जाओ !

हीरक ने कुछ उदास होकर विनीत स्वर से कहा—मेरे इस उपहार के बदले तुम्हे मेरी प्रार्थना मंजूर करनी चाहिये ।

रमा ने कुछ सोचकर उत्तर दिया—अच्छा, मैंने छुट्टी मंजूर की, किन्तु सारी रात कैसे जागोगे, मैं भी देखूँगी !

हीरक ने निश्चिन्त होकर कहा—प्यारी रमा ! माँ से कुछ न कहना, किन्तु...

रमा कुछ उत्तर न देकर चुपचाप चली गई। हीरक ने समझ लिया कि वह माँ के पास शिकायत करेगी। कुछ ठहर कर हीरक ने पुकारा—लोकनाथ दादा !

तुरन्त ही लोकनाथ आकर हाज़िर हुआ। हीरक ने पूछा—क्या नालिशों की पेटी ले आया ?

हीरक ने बाज़ार में, एक पेटी लटकवा दी थी कि प्रजा में यदि किसी को भी किसी नायब गुमाश्ते के विरुद्ध कुछ शिकायत करनी होती, एवं यदि वह प्रकट रूप से उसे हीरक के सामने बयान करते हुए डरता तो उस बक्स में अपनी अर्ज़ी लिखकर डाल देता था; जो अर्जी में अपने हस्ताक्षर करके नालिश करता तो भी हीरक उसके नाम को ज़ाहिर न करके अर्ज़ी की शिकायतों पर पूरी पूरी जांच करता था। हस्ताक्षर हीन चिट्ठियों को भी वह बड़ी ग़ौर के साथ जांचा करता था। इसलिये उसके सर्व अधीनस्थ कर्मचारी प्रजा को तंग करते हुए डरते थे। कोई निर्बल प्रजा को तंग न कर सकता था, एवं प्रजा भी निरुपद्रवी रहकर हीरक को भक्ति से प्यार करती थी।

लोकनाथ ने उत्तर दिया—हाँ, ले आया ।

हीरक बोला—उसे तो यहाँ रख जा, मैनेजर बाबू जो नकशे

भेजें, उन्हें भी यहीं रख जाना और एक बड़ा लेम्प जला दे जो रातभर जल सके ।

लोकनाथ ने आश्चर्य से आँखें फाड़कर कहा—सारी रात जागोगे? शायद बीमार होने की इच्छा है! आज ही तो कलकत्ते से आये, और—

झुँझलाते हुए चिढ़कर हीरक ने कहा—जो कुछ तुझे कह दिया है सो कर, ज़्यादा बक बक न कर।

लोकनाथ ने हीरक को जब से वह पैदा हुआ था, अपनी गोद में अनेक बार बैठाया था; उसने हीरक की बहुतसी झिड़कियें एवं उपद्रव सहे थे। वह हीरक के स्वभाव से अच्छी तरह परिचित था। चुपचाप वह बाहर चला गया।

लोकनाथ के जाते ही हीरक अपने इस अकारण क्रोध पर बहुत लज्जित हुआ; अपने स्नेहमय भृत्य की स्नेह मयी आशंका को उसने अपने प्रभुत्व के दम्भ से रौंद दिया! उसने सोचा कि लोकनाथ को बुलाकर उससे क्षमा मांगनी चाहिये। किन्तु नौकर से क्षमा माँगते हुए उसे शर्म आई, उसने सोचा कि जब वह लैम्प जलाकर आयगा तब समझा बुझाकर उसे प्रसन्न कर दूँगा।

इतने ही में माँ आगई। हीरक माँ को देखकर बोला—माँ तुम डरो नहीं! तुम अगर मनाकर दोगी तो मैं कार्य नहीं करूँगा, किन्तु इसमें अच्छा न होगा।

सुमति ने अपने हाथ को हीरक के मस्तक पर फेरते हुए कहा—बेटा! रात भर जाग कर क्या करोगे।

हीरक बोला—मैनेजर बाबू कह गये हैं, कि हजार टाकिया गाँव के ज़मींदार ने वहाँ के बंधे से एक नहर काट कर, उस नहर को चंचला नदी से मिला दिया है। इतनें जल के आने

से नदी भर आई है, दूसरे वर्षा भी खूब हो रही है, उस बाढ़ से पाथरगोला ग्राम के बह जाने का डर है। इसलिये अगर अपने चिथोल मारी बंधे का लॉकगेट खोल दिया जावे, तो पानी बह जा सकता है, किन्तु इससे कई धान और पाट के खेत बह जायँगे। मुझे अब यह देखना है, कि खेतों के डूब जाने से अधिक नुकसान होगा, या गाँव के डूबने से।

गम्भीर भाव से माँ ने उत्तर दिया—हजार टाकिये ग्राम के बाबू को कहो? वह जल बहना बंद क्यों नहीं करवाता?'

हीरक बोला—उन्हें कहा गया था। लेकिन वे सुनते ही नहीं, लातों के देवता बातों से कब मानेंगे? एक बार उनकी हड्डियाँ बजानी पड़ेंगी।

भयभीत हो कर सुमति बोली—नहीं बेटा! दंगा फ़साद से कोई जरूरत नहीं है, मनुष्यों को बचाने के लिये मनुष्य का खून कराने से क्या लाभ? इससे तो फसल का नष्ट हो जाना ही बेहतर है,ख़जाने का कर न लेने से ही बहुत सी हानि पूरी हो जायगी। तू रात को ज्यादा देर तक मत जागना—अभी तो बाहर से आया ही है!

हीरक बोला—माँ! तुम केवल अपने पुत्र का ही स्वार्थ सोचती हो; और इससे जो कितनी ही माताएं पुत्रहीना हुआ चाहती हैं; उनका तुम ज़रा भी विचार नहीं करती। मैं ज़मीं-दार होते हुए भी प्रजा का एक भृत्य हूँ, प्रजा के दुःखों की परवाह न करना मेरे लिये नमकहरामी है।

सुमति अपने पुत्र को कर्तव्य पर इतना दृढ़ देख प्रसन्नता से बोली—जाओ बेटा! जाओ! मैं तुम्हे मना नहीं करती। अपनी प्रजा के दुःखों का सच्चा प्रतीकार करो, लेकिन जहाँ तक हो सके जल्दी से जल्दी इस काम को समाप्त करके सो रहना।

हीरक ने सुमति का आदर करते हुए कहा ! तो माँ ! अब तुम यहाँ से चली जाओ, अगर तुम न आतीं, तो मैं अभी तक कभी से अपने काम को शुरू कर देता, जितनी ही देर करोगी, उतनी ही देरी मुझे सोने में लगेगी। फिर अगर मेरे सर में दर्द हो जायगा, तब तुझे व्यर्थ का कष्ट होगा।

हँसते हुए सुमति ने कहा—ओह ! मेरे लाल, यह क्या बोलता है। लो—मैं स्वयं चली जाती हूँ।

कुछ ठहर कर हीरकने मुस्कुरा कर कहा—माँ ! एक वचन में मत कहो, द्विवचन में बोलो, कि हम दोनों जाती हैं, वर्ना जो तुम्हारे पीछे खड़ी हो कर इस बात को बढ़ा रही है, वह मुझे न तो कार्य ही करने देगी; और न सोने ही देगी। तुम्हारे पास झूठी शिकायत करने के अपराध में आज सारी रात उसे कैद रक्खो।

प्रसन्न मुख से सुमति कमरे से बाहर जाकर रमा से बोली, चलो बहू ! वह तो पागल है, उसे अब अधिक न चिढाओ।

रमा अप्रसन्न मन से सास के पीछे पीछे चली गई, जाते समय उसने एक बार मुख फिराकर अपने सुन्दर भ्रूमण्डल की टेढ़ी चितवन से मुष्टि द्वारा हीरक को मुष्टिका प्रहार का भय दिखाया, उसका नाट्य देख हीरक ने मुस्कुरा दिया।

इतने में लोकनाथ एक बड़ा लैम्प उठा लाया, और उसे टेबिल पर रखते हुए उच्च स्वर से बोला—ये लो, एक रात नहीं, तीन रात जलने दो। हीरक ने लोकनाथ की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—लोकदादा ! नाराज़ न होना ! क्या ! तूने पाथरगोला के विपद समाचार सुने हैं ?

लोकनाथ ने उच्च स्वर से कहा—हाँ। वह तो सुन रक्खा है, लेकिन ये ढेर के ढेर रुपया पाने वाले मैनेजैर लोग क्या

कर रहे हैं? वे ही रात भर जागें न? वे इतना रुपया किस लिये पाते हैं?

हीरक ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा—मैं उन्हें सिर्फ दो चार सौ रुपया महीना ही देता हूँ, और मैं तो प्रजा से पाँच सात हज़ार रुपया प्रति मास लेता हूँ, भला किसको गर्ज ज्यादा है? उन्हें या मुझे?

लोकनाथ अस्पष्ट भाव से कुछ बक बक करता हुआ बाहर चला गया। हीरक के इतना समझाने पर भी उसका असंतोष न मिटा।

फिर हीरक पाथरगोला और चिथोल मारी के बंधे का नक्शा निकाल कर, और प्रजा के आये हुए कागज़ पत्र और P. W. D. की रिपोर्ट खोल कर कोई तरकीब ढूँढ़ने लगा।

हीरक को काम करते २ चार बजे का समय हो गया। चोकीदार लोग भी निस्तब्ध जनता को सावधान करते २ समय हुआ देख जाने लगे।

उनके स्वर में स्वर मिला कर शृगाल मण्डली भी "हुआ हुआ" कर उठी! लोकनाथ की नींद खुली तो उसने देखा; कि हीरक तब भी बैठा हुआ लिख रहा था; यह देख वह ज़मीन पर ही पड़ रहा।

उधर रमा को निद्रा कहाँ? वह रह रह कर चौंक उठती थी। वह सोचती थी, कि अब तक तो उसके स्वामी सब कार्य समाप्त कर चुके होंगे। किन्तु निरुपाय हो दीर्घ निश्वास लेकर करवटें बदलती रही। सुमति को भी चैन न था। वह रमा की उत्कण्ठा से व्यथित हो, रह रह कर उसके बदन पर हाथ फेर देती थी।

प्रातःकाल होना ही चाहता था। सुमति की कुछ कुछ

आँख लग गई थी। रमा की सारी रात बेचैनी से बीती। वह सुमति के सो जाने की प्रतीक्षा कर रही थी, उसके सो जाने का निश्चय करके वह धीरे धीरे उठकर बाहर आई और अपने कमरे के पास जाकर देखा, लोकनाथ कमरे के दरवाजे को बन्द करके सो रहा है। वह आगे न बढ़ सकी। जहाँ पर वह खड़ी थी वहाँ से हीरक नहीं दिखाता था, किन्तु मेज़ पर पड़ी हुई छाया को देखकर वह जान गई, कि वे अब भी बैठे बैठे कुछ लिख रहे हैं। रमा लम्बी साँस लेकर फिर चुपचाप जा कर सो गई। इधर रमा के जाते ही सुमति की आँखें खुल गईं। रमा को आकर चुपचाप सोते देखकर उसने समझ लिया कि वह हीरक के पास गई थी। उसने रमा के मुख पर अपना हाथ रक्खा। रमा चौंक उठी! सुमति ने पूछा—बेटी! हीरू सो गया या नहीं?

रमा के सिर पर लज्जा का पहाड़ टूट पड़ा, वह सास से छिपकर स्वामी से मिलने गई थी, और सास यह जान गई, इससे उसके कपोल, लज्जा से लाल हो गये। वह इतस्ततः करते हुए बोली—मालूम होता है अभी तक नहीं सोये; मैंने आते हुए मेज़ पर उनकी छाया देखी थी। कमरे में लेम्प जल रहा था। सुमति ने रमा से कहा—अच्छा बेटी! सो रहो। रमा चुप रही।

जब खूब उजाला हो गया, और पक्षी चहचहाने लगे, तब लोकनाथ उठ बैठा, और कपाट खोल कर एक दम कमरे में गया। हीरक ने एक बार उसकी ओर देखा, और फिर अपना कार्य करने लगा। लोकनाथ ने पूछा, सबेरा हो गया। क्या अब भी बत्ती जलाओगे? सारी रात तो एक जगह बैठे रहे, अब तो उठो!

हीरक कुरसी को ठेल कर उठ खड़ा हुआ। दोनों हाथों से सिर खुजलाते हुए उसने कहा—ओफ! कुछ भी न कर सका, मुझे स्वयं ही वहाँ जाना होगा। लोकनाथ दादा! ज़रा मैनेजर को बुला लाओ!

बत्ती गुल करके उसे उठाते हुए लोकनाथ ने कहा कि, इतने सबेरे ही क्या मैनेजर जाग गये होंगे? वे तुम्हारी तरह बेगारी टट्टू थोड़े ही हैं। हीरक ने मुस्कुराकर कहा—अच्छा ज़रा ठरह कर बुला लाना।

लोकनाथ चला गया। मुख फुलाकर रमा हीरक के कमरे के सामने होकर निकली। हीरक जल्दी से उसे पकड़ कर कमरे में ले आया। हँसते हुए हीरक ने पूछा—आज इतना असन्तोष क्यों?

रमा ने कहा—असन्तोष क्यों होगा? देखना तुम्हारे कार्य में फिर कहीं हर्ज न हो? हीरक ने हाहाः करके कहा—सारी रात यों ही खोई। आज अभी फिर पाथर गोला जाना होगा।

रमा अपने स्वामी के वाक्यों की दृढ़ता से अच्छी तरह परिचित थी। उसका चेहरा भयातुर हो गया। उसने डरते हुए पूछा—क्या अभी?

हीरक ने देखा—रमा की दोनों आँखें प्रणय के आवेश से लालिमा और विच्छेद-भय से आँसुओं से भर आईं थीं। उसने अपने एक हाथ से रमा के बिखरे हुए केश गुच्छों को सुलझाते हुए, और दूसरा हाथ उसके वाम स्कंध पर रखते हुए कहा—आज्ञा दो रमा! तुम्हारी आज्ञा के बिना मैं न जा सकूँगा। देखो, कितने लोग विपत्ति में पड़े हुए हैं। उनके दुःखों पर ध्यान दो?

रमा ने दीर्घ निश्वास लेकर पूछा ? क्या तुम्हारे गये बिना कुछ भी प्रबन्ध नहीं हो सकता ?

हीरक ने कहा—कुछ नहीं।

रमा ने ठहर कर कुछ सोचते हुए उत्तर दिया—तो फिर मैं कैसे मना करूँ ? सारी रात जगे हो, कुछ खा पी कर चले जाना।

हीरक ने कहा—खाना खाकर जाने से तो बहुत देर हो जायगी, कुछ बाँध देना, वहीं जाकर खा लूँगा। तुम माँ से कह कर अभी कुछ जलपान करने को ले आओ।

रमा स्वामी को शौचादि से निवृत्त होने को कह कर कमरे से निकली। हीरक फिर बोला—यदि तुम ला सको, तो मेरी ओर से माँ की आज्ञा भी ले आओ।

रमा हंस कर चल दी। वह हंसी वर्षा ऋतु की सन्ध्या के समय, डूबते हुए सूर्य की अन्तिम बिदा की तरह म्लान, और वेदना से आर्द्र थी।

सुमति पूजा कर रही थी। रमा एक तश्तरी हाथ में लेकर दरवाज़े पर खड़ी रही। सुमति ने उसे देख कर पूछा—क्यों बहू ! क्या हीरक का कार्य अभी तक समाप्त नहीं हुआ ?

रमा ने कहा, नहीं—अभी वे पाथरगोला जाने को कहते हैं।

सुमति ने व्यस्त होकर पूछा—अभी ? सारी रात जागा, फिर भी कुछ खा पीकर भी नहीं जायगा ? अच्छा उसे यहां ला कर जलपान तो करा दो।

रमा ने कुछ लज्जित हो कर हंसते हंसते कहा—वे डरते हैं, कि कहीं आप उन्हें मना न कर दें। कहा है, कि तुम्हीं जा कर मा की आज्ञा ले आओ।

सुमति ने पुत्र की मातृ-वत्सलता से प्रसन्न होकर कहा— अच्छा तो मैं उसे कुछ न कहूँगी ।

हीरक आइने के सामने बैठ कर कंघी कर रहा था, आइने में रमा का प्रतिबिम्ब देख कर, उसने एक ब्रश से बालों को दबाते दबाते कहा—मा क्या बोली, रमा ?

रमाने धीमें स्वर से कहा—छुट्टी मंज़र। मा ने तुम्हें पूजा-घर में बुलाया है ।

हीरक को भय था, कि उसे इस छुट्टी के प्राप्त करने में अनेक तर्क-वितर्क करने होंगे । किन्तु, सहज ही में छुट्टी मिल जाने से उसे बहुत आश्चर्य और प्रसन्नता हुई । वह रमा के साथ साथ सुमति के पास चला । पूजा घर में जाकर उतावले स्वर से हीरक बोला—माँ ! मैं जल्दी ही लौट आऊँगा ।

हीरक को सान्त्वना देते हुए माँ ने कहा—जल्दी लौट आने के लिये मैंने एक व्यवस्था भी सोच ली है, तुझे बहू को भी साथ ले जाना होगा ।

यह सुनते ही रमा का मुख प्रसन्नता से खिल उठा । हीरक ने मुँह फिरा कर रमा की ओर देखा । दृष्टि मिलते ही दोनों की आँखों की काली पुतलियां चंचल हो उठीं । माँ के इस विचित्र आदेश एवं स्त्री के उत्साह से "किंकर्तव्य-विमूढ़" हो कर हीरक ने माँ से कहा—मैं इसे वहां ले जाकर क्या करूँगा ? कहाँ कहाँ इसे साथ ले जाता फिरूंगा ? मैं तो अपने काम पर जाता हूँ ।

सुमति ने कहा—रात दिन काम थोड़े ही रहेगा ? यह बिचारी एक अरसे से यहां इस मकान में बन्द पड़ी है । तुझे इसे अवश्य ले जाना ही होगा । पाथरगोला की हवेली में, मैं
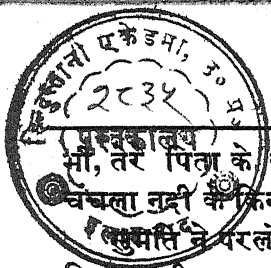
भी, तेरे पिता के साथ कई बार जा चुकी हूँ। वह हवेली चंचला नदी के किनारे पर बनी है।

सुमति ने परलोकगत स्वामी को याद कर के एक दीर्घ निश्वास ली। उसके स्वामी जब जीवित थे; तब उनको छोड़ कर वह एक क्षण भी अकेली न रहती थी। इसी लिये उसके पति उसे साथ साथ लिये फिरा करते थे। सुमति अपने मन से रमा के मन को जान चुकी थी, इसीसे उसने रमा को ले जाने का प्रस्ताव उठाया था। इतने ही में रमा जलपान करने को ले आई, और हीरक खाने लगा।

हीरक ने हंस कर कहा—तो माँ फिर तुम्हीं क्यों बाक़ी रहती हो, तुम भी चलो न ?

सुमति ने उत्तर दिया—अगर तुम मुझे ले चलो, तो मैं तुम्हें छोड़ कर थोड़े ही रह सकती हूँ। अच्छा मुझे भी ले चलो।

हीरक ने व्यस्त होकर कहा—नहीं, नहीं, तुम्हारी बीमारी वहाँ जाने से शायद बढ़ जाय।

पुत्र की स्नेहातुर आशंका से सन्तुष्ट होकर माँ ने कहा—अच्छा मैं तो नहीं चलूंगी, पर बहू को तो ले जाना ही होगा।

हीरक ने जलपान समाप्त कर के उठते हुए कहा—माँ, रमा को जल्दी तैयार कर दो, मैं मोटर मँगवाता हूँ।

हीरक रमा की ओर एक बार देखकर मन ही मन मुस्कुराता हुआ चल दिया। रमा उल्लास से अधीर एवं चंचल हो कर जाने की तैयारी करने लगी।

चतुर्थ परिच्छेद।

दुःखारम्भ।

अहह ! अधम आँधी आ गई तू कहाँ से ?
प्रलय घन घटा सी छा गई तू कहाँ से ?
पर दुख सुख तूने हा ! न देखा न भाला ?
कुसुम अध-खिला ही हाय, यों तोड़ डाला ?

चंचला नदी के तीर पर, पाथरगोला गाँव बसा हुआ है। नदी के किनारों के बराबर ही हीरक की हवेली बनी हुई है। उसके चारों ओर फलफूलों के वृक्ष लगे हुए हैं। रमा के उल्लास का आज अन्त नहीं। चंचला नदी किनारे तक लबालब भरी हुई, चंचला बालिका की तरह खरतर वेग से भागी हुई चली जा रही है। हीरक के बगीचे में अपराजिता के फूल अपनी सुन्दर नीली आँखें खोलकर जल की व्यस्त गति को देख रहे हैं।

रमा नायब गुमाश्तों की स्त्रियों के साथ इधर उधर बेधड़क भागा दौड़ी एवं क्रीड़ा कर रही है। किन्तु उसका आनन्द कम नहीं होता, ऐसा जान पड़ता है; कि एक बद्ध हरिणी फिर स्वतन्त्र, वन में विचर रही हो।

लेकिन संध्या समय अकस्मात मेघ घिर आये, युवतियाँ शङ्कित होकर आपस में बातें करने लगीं, कि नदी तो लबालब भरी हुई है, फिर इस भीषण आँधी तथा मेघ के घिर जाने से कहीं सारा गाँव न बह जाय।

किसी किसी युवती ने अपने मन को साँत्वना देने के लिये कहा—नहीं जी, जाड़े की बरसात है, यों ही बूँदाबूँदी होकर रह जायगी।

इस आश्वासन को सुनकर भी रमा का मुख सूखा रहा। उसने उद्विग्न होकर पास ही खड़ी हुई एक दासी को कहा—जा, ज़रा लोकनाथ दादा को कह कर उन्हें बुला दे।

रमा सब से बिदा होकर हवेली के दूसरे मंज़िल के बरामदे में जा बैठी एवं बड़ी व्याकुलता से हीरक के आने की प्रतीक्षा करने लगी। सन्ध्या का अन्धकार काले काले बादलों के घिर आने से और भी गहरा हो गया। रमा का मुख भी साथ ही साथ भय और व्याकुलता से म्लान होने लगा।

इतने ही में हीरक ने आकर हँसते हँसते पूछा—क्या तुम्हें बादलों को देख कर ही डर लगने लगा ?

रमा ने सूखी हँसी हँस कर कहा—तुम मेरे पास हो रहो। शायद मेह-पानी से नदी में बाढ़ आ जाय।

हीरक ने बेपरवाही से हँस कर कहा—नदी में बाढ़ आजाने से भी तो जल यहाँ तक नहीं आ सकता। मैं चिथोल मारी बन्धे के लॉकगेट को खोलने का हुक्म दे आया हूँ। डरो मत। आज तो संध्या हो गई और बादल भी घिर रहे हैं। कल मैं तुम्हें बन्धे से जल बहता हुआ बताने को ले चलूँगा।

स्वामी की बातों से निर्भय होकर रमा ने फिर उत्फुल्ल होकर कहा—कल नाव में बैठ कर मैं बन्धे की सैर करने चलूँगी, वहाँ बहुत से कमल के फूल लगे होंगे। उनको मैं अपने हाथों ही से तोड़ लाऊँगी।

हीरक ने कुछ मुस्कुरा कर कहा—अच्छा, वैसा ही होगा। तुम्हारे तोड़े हुए फूलों से कल हमारी "फूलशय्या" होगी।

रमा के लिये आज हीरक ने कुछ फूल मँगवाये थे। रमा ने उन फूलों की माला गूँथ कर रख छोड़ी थी। उसने माला

लाकर हीरक के गले में डालते हुए कहा—लो आज हमारा "माल्यदान" ही सही ।

हीरक ने अपने गले की माला उतार कर रमा को पहना दी और कहा—फूल ही के गले में फूल शोभा पाता है । यह माला तुम्हीं पहनो ।

* * * * * *

अकस्मात व्यथित विरही के दबे हुए विलाप की तरह "हू हू" करके वर्षा तथा आँधी का दौरा प्रारंभ हुआ । खटा खट करते हुए कपाट तथा जंगले टूट टूट कर गिरने लगे । जल की बौछारें कमरे में आकर पड़ने लगीं । चारों ओर व्याकुलता छा गई । दासदासी कपाट बन्द करने लगे, और चौकी-दारों ने "सावधान सावधान" कह कर सब को चौंका दिया ।

रमा भयभीत होकर हीरक के और भी पास जा बैठी । हीरक उसे अपनी भुजाओं से बाँध कर साँत्वना देने लगा ।

क्रमशः आँधी का वेग प्रबल होने लगा । चंचला नदी लाखों तरंगों द्वारा परस्पर ताली बजाती हुई, रंग में मतवाली हो उठी । पवन मेघधारा का आँचल उठा २ कर अठखेलियाँ खेलने लगा, और बार बार वृक्षों की चोटियों को पृथ्वी पर छुआ छुआ कर मदमत्त हो उठा । धनुष की टँकार के समान ध्वनि करते हुए कई वृक्ष फिर सीधे होने लगे, और कई एक वृक्ष सदा के लिये भूतलशायी हो गये । इसी तरह से वृष्टि तथा हवा का वेग बढ़ने लगा । यह देख हीरक का मुख भी सूख गया—वह व्यस्त स्वर से बोला—

ओहो—साईक्लोन ! आँधी ! आँधी !! प्रचण्ड मतवाली आँधी !!! लाखों करोड़ों राक्षस जैसे रण में मत होकर पैंतरा बदल रहे हों ।
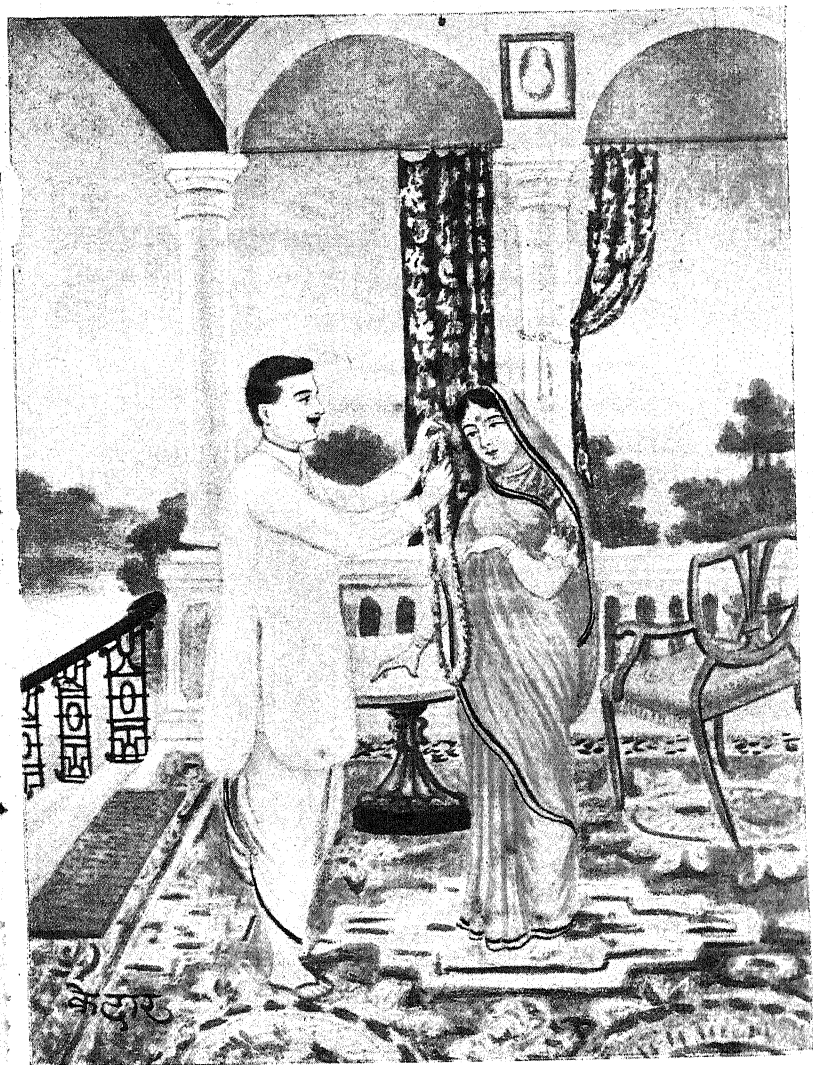
हीरकने अपने गलेकी माला उतार कर रमाको पहना दी और कहा—फूलहीके गलेमें फूल शोभा पाता है, यह माला तुह्मी पहनो। (पृष्ठ ३४)
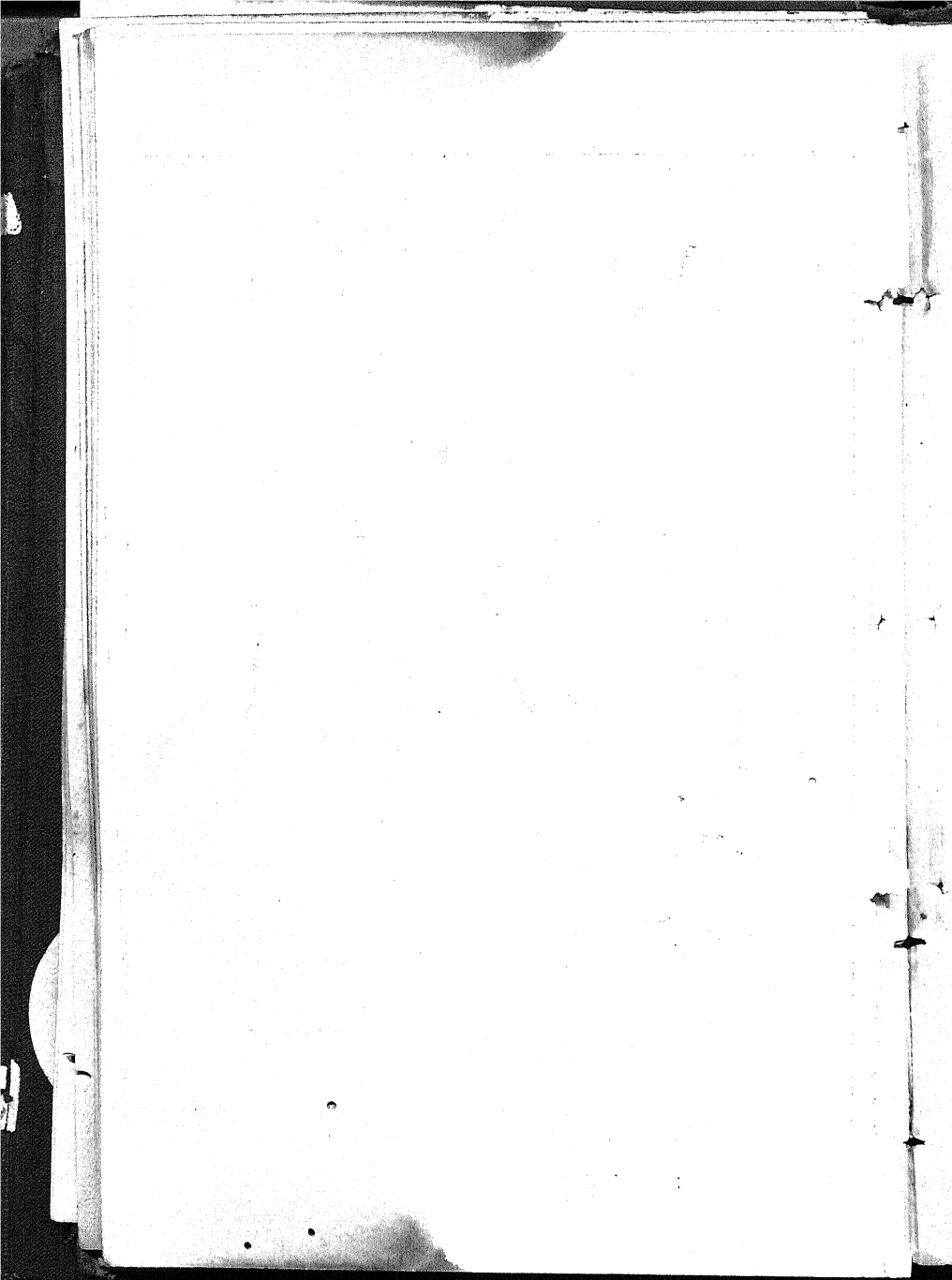
मदमत्त पवन के झोंकों से हवेली के ऊपर लगा हुआ टिन झनझनहाट करता हुआ नीचे गिर पड़ा। पवन के वेग से हवेली भी डगमगाने लगी।

हीरक ने रमा को अपनी छाती से लिपटा कर कहा—चलो, रमा, नीचे उतर चलें। आज अच्छे आसार नज़र नहीं आते।

रमा भयभीत पक्षी की तरह हाँपते हाँपते स्वामी से लिपट कर खड़ी हो गई। हीरक रमा के साथ सीढ़ियों तक आया ही था कि आँधी के एक प्रचण्ड हिलोरे से, वह हवेली—बौं—औं—औं—कर उठी। इस बिकट ध्वनि के साथ ही साथ हवेली का कुछ हिस्सा दहल कर हीरक और रमा पर आ पड़ा! उस विकट कोलाहल में मालूम भी नहीं हुआ कि, रमा और हीरक को दबकर आपस में अन्तिम बिदा लेने का अवसर भी मिला था, या नहीं!

उस समय सब को अपने परिवार परिजन की पड़ी थी। किसीने इस ओर लक्ष न किया, तो भी इस शब्द को सुनकर लोकनाथ दौड़ा हुआ आया, और फिर नायब गुमाश्ते लोग भी आ जुटे। उस समय आँधी ऐसे ज़ोरों पर थी, कि सिवा वायु के हूहू शब्द के और कुछ सुनाई न पड़ता था। वृष्टि की बौछारों की मार छुरें की याद दिलाने लगी। वृक्षों के उखड़ने, छतों के गिरने, एवं बिजली की कड़कड़ाहट को सुनकर लोगों को अपनी ही अपनी पड़ी थी। लोकनाथ की आँखों से अवि-रल अश्रुधारा बह रही थी, उसके करुण विलाप का अन्त न था, वह एक पागल की भाँति कुदाली से मिट्टी, चूना और ईंटें हटाने लगा। आँधी पानी में लालटेन का उजाला भी न टिकता था। सब लोग रोते रोते अन्धकार में मिट्टी, चूना और ईंटें हटाने लगे। आँधी के झोंकों से रह रह कर वह हवेली

मट् मट् करने लगती थी और दब जाने के भय से सब लोग बारबार भागते थे। केवल एक लोकनाथ का ध्यान किसी ओर न था, न उसे प्राणों की परवाह ही थी, और न पवन देव की भृकुटि ही का भय।

आँधी और पानी दोनों जब बन्द हुए तब रात्रि के दो बज चुके थे। सारी रात परिश्रम करने के बाद जब हीरक और रमा की देहें निकलीं, तब भोर हो चुका था, किन्तु आज के इस भोर का पक्षियों ने मधुर गान गाकर स्वागत न किया।

जान पड़ता था मानो देव-दानवों के युद्ध में अपने विजय गौरव से चण्डिका हंस रही हो।

वृद्ध लोकनाथ अबतक तेजस्वी युवकों के सदृश परिश्रम कर रहा था। रमा और हीरक की परस्पर निबिड़ आलिङ्गन की हुई देहें जब बाहर निकलीं तो वह खड़ा न रह सका; हाय दैव! यह क्या? कह कर पछाड़ खाकर करुण आर्तनाद करते हुए गिर पड़ा। साथ ही क्लान्ति, उद्वेग और शोक से विह्वल हो कर उसे मूर्छा आ गई।

हीरक और रमा को देखकर यह नहीं जान पड़ता था, कि दोनों के प्राण पखेरू उड गये हैं, अथवा हैं? तो भी उनको अलग अलग बिछौने पर सुला दिया गया। उनके शरीर की धूल झाड़ दी गई और मुँह में कुछ जल दिया गया। आदमी पर आदमी डाक्टर लेने के लिये दौड़ाये जाने लगे।

यह शोक-समाचार थोड़े ही समय में सारे ग्राम में फैल गया। प्रजा अपने सब घर-बार एवं मुमुर्षु पुत्र कन्या को छोड़ कर भागती हुई हवेली के नीचे एकत्रित होने लगी। कल उनके प्राणप्रिय जमींदार के आगमन से जो ग्राम आनन्दमय हो गया था, आज वहाँ हृदय-वेधक दारुण विलाप कर्णगोचर

होने लगा। पाथरगोला की भग्नप्राय हवेली में शोकार्त प्रजा की भीड़ जमने लगी।

ग्रामीण डाक्टर ने अपनी टूटी फूटी अल्प-विद्या द्वारा यह जान लिया कि हीरक तो जीता है, किन्तु रमा का वदन बिलकुल अप्रसन्न होगया है।

अस्पताल से असिस्टेण्ट सर्जन को लाने के लिये नवग्राम को मोटर दौड़ाई गई। मोटर के वापस आने तक सन्ध्या हो गई थी। डाक्टर तथा मैनेजर बाबू आ गये। डाक्टर ने जाँच करके प्रकट किया, कि रमा तो मर चुकी है, और श्वाँस के रुक जाने, एवं कपाल में ज्यादा चोट आने के कारण हीरक की चेतनता जाती रही है।

डाक्टर के उद्योग से बहुत देर बाद हीरक की कुछ कुछ आँखें खुलीं। परन्तु दृष्टि जमी नहीं, वह शून्य-दृष्टि से ताकता ही रहा।

डाक्टर के आदेश से रमा की देह हटा दी गई; और चंचला नदी के तीर पर उसकी दाह क्रिया कर दी गई।

हीरक जीवित है। वह कुछ कुछ होश में आता जा रहा है यह सुनकर लोकनाथ बदन झाड़कर उठ बैठा; एवं क्षणोपरान्त आँखें पोंछ कर हीरक की शुश्रूषा में लग गया।

डाक्टर की सलाह से हीरक को मोटर में लिटाकर नवग्राम ले जाना तय हुआ। मोटर पर तख़्ते बिछा कर उसपर हीरक को बिठा दिया गया। हीरक के साथ डाक्टर और लोकनाथ रहे।

मोटर में चढ़ते चढ़ते लोकनाथ रोने लगा। बहूरानी को यहीं छोड़ कर वह कैसे माँ को मुँह दिखलायगा? जब हीरक को होश होगा, तब रमा के विषय में क्या कह कर उसे

सान्त्वना देगा ? यही बातें उसके मस्तिष्क में चक्कर खाने लगीं। मैनेजर और डाक्टर बाबू ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा—बाबू को होश आता जाता है। यह दुर्घटना अभी उनको मालूम न होनी चाहिये, अन्यथा अनर्थ होने की संभावना है।

सिसकता सिसकता लोकनाथ मोटर पर चढ़ा और मोटर पवन वेग से नवग्राम को रवाना हुई।

मोटर जब नवग्राम पहुँची, तब मोटर के शब्द को सुनकर सुमति ने एक दासी से पूछा; क्या ? हीरू रमा आ गये ?

यह भीषण दुर्घटना सब दास दासी सुन चुके थे, लेकिन किसीने सुमति से अभी तक कहने का साहस नहीं किया था ! दासी ने मुख फिरा कर दबी हुई आवाज़ से कहा—जाती हूँ।

सुमति ने बाहर सीढ़ियों के पास आते ही देखा, कि दास दासी कन्धे पर रखकर उसके प्राणप्रिय पुत्र हीरक को ऊपर ला रहे हैं। पुत्र की यह दशा देखकर सुमति ने घबराकर पूछा—लोकनाथ, इसे क्या हुआ रे ?

लोकनाथ आकर माँ के पैरों में पछाड़ खाकर गिर पड़ा और बोला—कल की आँधी हमारा सर्वनाश कर गई।

सुमति ने त्रसित नेत्रों से एक बार हीरक की ओर देख कर पूछा—हीरक ज़िन्दा तो है न ?

प्राण तो हैं, पर धुक धुककर रहे हैं। होश हवास बिल्कुल नहीं। यह क्या हुआ, माँ ! कहता हुआ लोकनाथ फिर रोने लगा।

सुमति ने घबरा कर पूछा—बहू कहाँ है ?

रोते हुए लोकनाथ ने कहा—माँ ! हम लोग अपनी उस सुवर्ण प्रतिमा को चंचला नदी के जल में विसर्जन कर आये।

अब और सुमति खड़ी न रह सकी। वहीं अचेत होकर भूमिपर गिर पड़ी। उसे हृद्रोग की बीमारी थी। इसके सुनते ही उनका हृदय टूटसा गया। चेतनता जाती रही।

कुछ समय बाद जब उन्हें चेतना हुई, तब पास ही खड़े हुए डाक्टर बाबू से उन्होंने पूछा—मेरा हीरू तो बच जायगा न?

डाक्टर ने भरोसा देकर कहा—प्राण जाने की तो कोई आशंका नहीं।

डाक्टर के इस उत्तर से प्राणों का भय छोड़कर अन्य किसी दारुण संकट की आशंका करते हुए उन्होंने पूछा—तो?

"तो" के उत्तर में डाक्टर को इतस्ततः करते हुए देखकर सुमति ने फिर कहा—आप मुझसे कुछ न छिपायें—सब बातें साफ़ साफ़ कहें, डरें नहीं।

डाक्टर ने कहा—लकवा हो जाने का भय है। सुमति ने मैनेजर बाबू की ओर मुख फिरा कर कहा—ज़िला के सिविल सर्जन को बुलाने के लिये तार दो, और एक तार आनन्द बाबू को दो, कि कलकत्ते से दो अच्छे डाक्टरों को लेकर चले आवें। डाक्टर बाबू! हीरक आपही का है। आप ही इसे बचाइये।

इतना कहते २ सुमति व्याकुल होकर रोने लगी। डाक्टर एवं मैनेजर बाबू उन्हें सान्त्वना देने की चेष्टा करने लगे। डाक्टर ने कहा—आपकी अवस्था ख़राब है। आपके अशान्त रहने से आपका रोग और बढ़ जायगा।

सुमति ने कहा—अब मैं बड़ी मुश्किल से जी रही हूँ! हा! मेरे घर की एकमात्र दीपक वह रमा, अचानक ही चल बसी। और उसपर भी हीरू की यह अवस्था? मैं कैसे धैर्य धरूँ?

मैनेजर ने कहा—आपके न रहने से बाबू को किसका

आश्रय रहेगा ? उन्हें होश आता जाता है, आपको देखने से उनका मन बड़ा शान्त होगा।

सुमति ने रोते हुए कहा—अगर बहू जीती रहती, तो वह सहज ही मेरे हीरू को बचा सकती थी। मुझ जलमुँही ने ही उसे मृत्यु के मुख में डाल दिया। हा! जब हीरू होश में आकर रमा को ढूंढ़ेगा, तब मैं क्या कहकर उसे सांत्वना दूँगी। बहू की मृत्यु को सुनकर क्या वह बच सकेगा ?

सुमति ने अनुरोध करके ही रमा को हीरक के साथ भेजा था। अतः वह स्वयं ही अपने को इसकी अपराधिनी समझती थीं, और इसी लिये बारम्बार अपने को धिक्कारती थीं। वे आकुल हो कर रोती हुईं, ज़मीन पर लोट लोट कर पुकारने लगीं—मेरी गृह लक्ष्मी बधू! आजा! आजा! वापस आजा! बेटी तुम्हारे पहिले मुझे ही मरना था। तुम मेरे हीरू की आनन्ददायिनी थीं, मेरे बीमार होने से तुम्हारा मुख सूख जाता था, आँखों से जल बहने लगता था। आज तुम्हारी सास भूमि पर पड़ी हुई तुम्हें पुकार रही है! बेटी! तुम कहाँ हो ?

रोते रोते सुमति फिर अचेत हो गई। डाकृर ने औषधि देते हुए, मुख विकृत करके कहा—अवस्था क्रमशः खराब होती जा रही है। इनका एक आध मास से अधिक बचा रहना असम्भव है।

मैनेजर बाबू ने म्लान मुख से पूछा, और बाबू ?

धीमे स्वर से डाकृर ने कहा—बाबू की अवस्था भी अच्छीं नहीं है। उन्हें लकवे की बीमारी है, वे इस तरह से पाँच सात वर्ष भी रह सकते हैं।

मैनेजर बाबू मलीन चेहरे से बाहर चले गये। इसी समय

एक सेवक ने आकर ख़बर दी, कि बाबू आँखें खोल २ कर देख रहे हैं। होश आ गया है।

डाकृर ने कहा—जाओ, मैं माँ को संभाल कर अभी आता हूँ। हीरक आँखें खोल कर चारों ओर ताकते हुए समस्त घटनायें याद करने लगा। लोकनाथ ने यह देख, खुश एवं व्यग्र हो कर हीरक के मुख के पास झुककर क्रन्दन-मिश्रित स्वर से कहा—भैया!

हीरक ने फिर चहुँ ओर एक बार देखकर क्षीणस्वर से कहा—हाँ! लोकनाथ ने और भी खुश होकर पूछा—मुझे पहचानते हो भैया!

क्षीण स्वर से हीरक ने कहा—लोक दादा!

लोकनाथ आँसू न रोक सका। दोनों हाथों से हीरक को जकड़ कर वह "हू हू" करके रोने लगा।

कुछ क्षणभर तक हीरक ने चुप हो कर क्षीण स्वर से कहा रमा! रमा कहाँ है? रमा कैसी है?

लोकनाथ जल्दी से उठकर बाहर चला गया, पर शोक छिपाया न छिप सका। कमरे के दर्वाजे को पार करते करते ही वह उच्चस्वर से रो उठा।

तनिक आँखें फिरा करके तीव्रस्वर से हीरक ने पुकारा—लोकदादा!

लोकनाथ ने चिहुँक कर फिर कर देखा। हीरक की विरक्त एवं कठोर दृष्टि को देख कर वह डर गया, एवं उलटे पाँव वापस आकर उसने पूछा—क्या है भाई! क्यों इस तरह चिल्लाते हो?

क्रुद्ध हीरक ने कठोर स्वर से कहा—रमा कहाँ है? बता। सच बता।

वृद्ध लोकनाथ; क्या उत्तर दूँ—यह सोचने लगा, इतने ही में डाकृर बाबू आ गये। डाकृर को देख कर रुष्टस्वर से हीरक ने कहा—डाकृर बाबू! हम दोनों छत के नीचे दब गये थे, अगर आप हम दोनों को न बचा सके; तो मुझे ही क्यों बचाया? मैं देखता हूँ, कि मेरे हाथ पैर सब विवश हो गये हैं। पक्षाघात से अधमरा हो जाने से तो मेरा मर जाना ही अच्छा था।

हीरक को बोलने की शक्ति आ गई जानकर, डाकृर ने प्रसन्न होकर पूछा—आप क्या कह रहे हैं। अब आप शीघ्र ही अच्छे हो जायंगे।

अब और अच्छा! डाकृर बाबू! मैं नीरोग होकर क्या करूँगा, मेरी जो प्रिय वस्तु थी, वह मुझे छोड़ कर चली गई। हा! मैं उसे माँ के पास से ले गया, किन्तु उसे वापस न दे सका। मैं कैसे मा को मुँह दिखाऊँगा?

डाकृर ने कहा आप शान्त हों, माँ को कठिन ज्वर चढ़ा हुआ है, आप को कातर देखकर वे बड़ी दुखी होती हैं, क्या आप नहीं जानते?

हीरक फूट फूट कर रोने लगा। माँ—माँ—माँ! डाकृर बाबू! मुझे माँ के पास ले चलिये। मैं माँ को देखना चाहता हूँ।

डाकृर ने कहा—अभी उनके पास जाने से उनका मन चंचल हो जायगा। कल स्वस्थ होकर आप स्वयमेव चल कर उनसे मिल लेना।

हीरक व्याकुल हो कर रोने लगा, डाकृर ने भी कोई बाधा न की। क्योंकि उसे मालूम था, कि इस क्रन्दन से आहत स्थान की स्नायुशिरा एवं अस्थि मज्जा, जाग्रत, सबल, और सतेज हो सकेंगी।

पञ्चम परिच्छेद ।

परामर्श ।

दिन बीतते थे सर्वदा, आमोद में जिनके बड़े ।
हैं आज एकाएक ही वे, दुःख सागर में पड़े !!
हत प्राण नत मस्तक किये, गत सत्व साँसे ले रहे !
हा ! किन्तु हम इस पर कभी क्या ध्यान भी हैं दे रहे?

आनन्द बाबू को मैनेजर का तार मिला। वे दो अच्छे प्रसिद्ध डाक्टरों को लेकर नवग्राम पहुँचे। डाक्टरों को हीरक के कमरे में आनन्द बाबू के साथ देखकर हीरक ने उत्तेजित स्वर से पूछा—बाबू जी ये कौन हैं ?

आनन्द बाबू ने हीरक के पास जा कोमल स्वर में कहा—बेटा ! ये लोग डाक्टर हैं, तुम्हें देखने आये हैं।

रुष्ट होकर हीरक चिल्ला उठा—किसने आपको यह खबर दे दी ! ये डाक्टर आप क्यों लाये हैं ? मैं अब स्वस्थ होकर क्या करूँगा ? मैं अच्छा नहीं होना चाहता। रमा मुझे छोड़कर चली गई ! मुझमें इतना बल नहीं, कि मैं आप लोगों से आत्म-रक्षा कर सकूँ। मैं आपके चरणों में पड़ता हूँ, कृपा करके आप इस कमरे से चले जाइये।

हीरक अत्यन्त उत्तेजित एवं चंचल हो गया। आनन्द बाबू ने उसके पास बैठकर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—बेटा ! तुम मृत्यु-कामना क्यों करते हो ? इस अवस्था में तुम्हारी मृत्यु होना असम्भव है। इस तरह अक्षम होकर क्या तुम्हें दिन बिताना अच्छा लगता है ? क्या तुम्हारी माँ का तुम्हें कुछ भी खयाल नहीं है ? तुम्हें इस तरह पड़े देखने से भला उनके चित्त को कभी शांति होगी !

माँ का नाम सुनते ही हीरक का हृदय द्रवित हो गया। और वह फूट फूट कर रोते रोते माँ! माँ! माँ पुकारने लगा।

यह सुयोग पाकर डाक्टर लोग उसकी परीक्षा करने लगे। हीरक ने फिर कहा—क्या आप लोग मेरा पीछा न छोड़ेंगे? मैनेजर साहब! इन लोगों को यहाँ से ले जाइये।

रोगी को आवश्यकता से अधिक उत्तेजित हुआ देखकर डाक्टरों ने कहा; अच्छा हम स्वयं ही चले जाते हैं।

डाक्टरों ने हीरक की परीक्षा करने का जितना अवसर पाया; उससे वे समझ गये; कि रोगी की अवस्था अत्यन्त खराब है। उसको इसी हालत में जीवन बिताना होगा, एवं इस जीवन की मर्यादा पाँच सात वर्ष से अधिक नहीं है। हीरक बलिष्ट होने से ही अभी तक जीवित है, यदि उसके दिल में बचे रहने की कुछ भी इच्छा होती, तो वह बचा रह सकता था। अपनी प्राणों से भी प्यारी पत्नी के मर जाने से उसका हृदय अत्यन्त व्यथित है। वह ढूँढ़ने पर भी आनन्द का नाम निशान नहीं पाता, ऐसी अवस्था में यदि उसकी माँ उसके पास रहती, तो उसे बहुत सान्त्वना मिलती; किन्तु माँ की; अवस्था इससे भी खराब है। रोगी को माँ के पास ले जाना, दोनों ही के लिये विपद् जनक है; माँ की अवस्था देखकर पुत्र, और पुत्र की अवस्था देखकर माँ, दोनों ही दुःख पावेंगे। इससे दोनों की मृत्यु और भी निकट आ जायगी। यदि एक के सामने दूसरे की मृत्यु होगी, तो फिर कुछ पूछना ही नहीं, साथ ही साथ दूसरा भी चल बसेगा। यह बहुत अच्छा है कि सुमति पुत्र वधू के शोकमें हीरक से मिलना भी नहीं चाहती, चेतना होने पर वे क्षीण कण्ठ से पुकारती रहती हैं—मैंने मेरी गृहलक्ष्मी प्यारी रमा को अपने हाथों ही से खो दिया, अब

कैसे मैं हीरू को मुह दिखलाऊँगी ? अगर बहू बच जाती, तो वह हीरू को भी अच्छा कर सकती थी, अब कौन मेरे हीरू को सँभालेगा ?

सुमति के मन में यह समस्या प्रबल हो उठी, पीड़ित हीरू की कौन सेवा करेगा, वे जान गई थीं, कि डाक्टर लोग कितना ही भरोसा क्यों न दें, किन्तु अब उसकी मृत्यु निकट ही है। वह जितने दिन जीयेगी, शय्या ही पर पड़ी रहेगी। इस अवस्था में पीड़ित एवं शोकित हीरू को कौन देखेगा।

नौकर लोग हजारों यत्न करने पर भी बराबर शुश्रूषा न कर सकेंगे। जहाँ आत्मीयता नहीं, ममता नहीं, जहाँपर केवल कर्तव्य ही है, प्रेम का संपर्क नहीं, वहाँ त्रुटियाँ होना अवश्यम्भावी है। सम्पत्ति-शाली हीरक से लोग उपरी आत्मीयता तो दिखायेंगे, किन्तु वे लोग हीरू की फिक्र न रखकर, उसकी सम्पत्ति को हथिया लेने की फिक्र में ही रहेंगे। हाँ, एक लोकनाथ है, परन्तु वह भी वेतन के संपर्क से बँधा है। और उसपर भी पुरुष है, स्त्री नहीं। हीरक जो शिशु से भी अधिक असहाय हो गया है, अब उसके चित्त को प्यारी रमा. अथवा ऐसी ही कोई आत्मीया स्त्री अथवा माँ के सिवाय कोई शांति नहीं पहुँचा सकता।

जहाँ जहाँ अपनी जितनी आत्मीय स्त्रियाँ थीं, सुमति एक एक करके सब को याद करने लगी, परन्तु कोई भी ऐसी स्त्री ध्यान में न आई, जो उसकी अथवा रमा के स्थान की पूर्ति कर सके। डाक्टरों ने कहा है, कि पक्षाघात रोग, इच्छा शक्ति के ही अभाव का फल है। कैसे हीरक के मन में जीवन का माधुर्य, एवं जीवित रहने की इच्छा का संचार किया जाय ? अहा ! रमा अगर आज हीरक की तरह होकर भी बची रहती, तो

हीरक उसकी आशा से स्वस्थ हो जाता। उसके मन में जो रमा के प्रेम की जड़ थी, वही उसे स्वस्थ कर देती। क्या और किसी युवती द्वारा रमा के स्थान की पूर्ति नहीं हो सकती? यदि हीरक का फिर से विवाह कर दिया जाय? किन्तु ऐसे मरणाभिमुख व्यक्ति को अपनी पुत्री कौन देगा?

भारत में लड़कियों का अभाव नहीं है, कुछ मूल्य भी नहीं है। बूढ़े की भी तो शादी हो जाती है, उस पर यह तो ज़मीदार है, एवं इसका घरभी समृद्धि शाली है, इसे तो अनेक लड़कियाँ मिल सकती हैं, लड़की के माता पिता भी प्रसन्न मनसे अपनी लड़की ब्याह देंगे। किन्तु क्या वह लड़की ससुराल आते ही स्वामी की सेवा कर सकेगी? क्या हीरक फिर से विवाह करना स्वीकार करेगा? क्या कोई अच्छी युवती नहीं मिल सकती, जो हमारी जान पहचान की हो? यदि कोई ऐसी युवती हीरक की सेवा के लिये तत्पर हो जाय, तो किसी उपाय से हीरु को भी राज़ी किया जा सकता है। किन्तु लड़की ऐसी मिलनी चाहिये, जिसकी प्रकृति स्नेहमयी, शान्त, एवं सत् हो, जो हीरू के पाणि ग्रहण करने के योग्य हो, एवं यहाँ आते ही हीरू की सेवा का गुरुतर भार अपने ऊपर ले सके। प्रथम ही प्रथम तो अर्थ की वांच्छा से, एवं क्रमशः प्रणय-संचार के होने से, दोनों ही एक दूसरे को चाहने लगेंगे। किन्तु संसार तो मनुष्य की इच्छा के अनुसार नहीं है। अपनी इच्छानुसार सब सुख की सामग्रियों का प्राप्त होना संसार में बहुत दुर्लभ है। सब वस्तुयें एक ही कारीगर ने अपनी इच्छानुसार बनाई हैं: जिसका अदृष्ट प्रबल है, उसे ही स्वेच्छानुसार वस्तुयें प्राप्त होती हैं।

सुमति के मन में यह समस्या जितनी ही अधिक जटिल

होती जाती थी; उतना ही रमा के शोक से उनका हृदय अधिक कातर हुआ जाता था । बेटी ! लक्ष्मी बहू ! प्यारी रमा ! अगर तू जीवित रहती, तो सावित्री की तरह, यम के साथ युद्ध करके भी मेरे हीरू को बचा सकती थी । बेटी ! यह अमृत-मयी शक्ति तुझमें ही थी ।

अपनी बधू की मृत्यु से शायद बहुत कम सासुएं इतनी दुखित होती होंगी । प्रथम तो रमा सुमति को पुत्री से भी अधिक प्यारी थी, और अब सुमति के मरणासन्न होने तथा हीरक की असहाय अवस्था के कारण, उसका पद बहुत ही बढ़ गया था । सुमति को इतनी व्याकुल देखकर डाक्टर लोग बड़े चिन्तित और भयभीत हुए ।

आनन्द बाबू ने ये सब बातें सुनीं । सुमति की इच्छा को भली भाँति समझ कर वे बोले—आप जिस तरह की लड़की चाहती हैं, ठीक उसी प्रकार की सर्व गुण संपन्ना लड़की मेरे यहां पर है, किन्तु वह आपकी सजातीय नहीं है, यही एक बाधा है ।

उत्तेजित होकर सुमति ने कहा—अब और जाति ! अब जाति पाँति को ले बैठकर मैं क्या करूँगी ? मेरा जीवन-दीप अब बुझना ही चाहता है । वैतरणी घाट का माँझी मुझे पुकार रहा है । हीरू भी मेरा क्या ऐसी हालत में अधिक दिन बच सकेगा ? बहू भी गई, मैं भी चली जाऊँगी, तब मेरे हीरू को कौन संभालेगा ? जितने दिन मैं जीऊं, उतने दिन यदि कोई स्त्री उसकी यथोचित सेवाकर सके, तो मैं सुख से मरूंगी, और हीरू भी भला चंगा हो जायगा । इतना कहते कहते सुमति रोने लगी । यह देख आनंद बाबू बोले—मैं अभी जाता हूँ, अगर वह यहां आने पर राजी होगी, तो लेता आऊँगा ।

सुमति ने व्यग्र होकर ज़ोर से कहा—आनंद बाबू ! आप उसे किसी तरह से समझा कर तो यहाँ तो लाइये; वह ग़रीब लड़की है; अनाथा है, यदि उसको उपयुक्त पात्र न मिला, तो उसे आजीवन दुःख उठाना पड़ेगा। मैं अच्छी तरह से जानती हूँ, कि वह अभी तो हीरू को अपना स्वामी न बना सकेगी, किन्तु हीरू की समस्त संपत्ति की एवज़ में क्या वह कुछ दिन तक उसकी सेवा भी न कर सकेगी ?

व्यथित होकर आनन्द बाबू बोले—नहीं वह बड़ी समझदार लड़की है, अगर उसे राज़ी कर सका, तो वह हीरू की सेवा में कोई त्रुटि नहीं रक्खेगी।

व्यग्र होकर सुमति बोली—तो अब आप और अधिक देरी न करें। कल ही उसे ले आवें।

आनन्द बाबू बोले—इस बारे में एक बार हीरू का मत ले लिया जाता, तो अच्छा होता।

सुमति ने कहा—नहीं, नहीं, अभी नहीं, यदि वह राज़ी न हुई, तो मेरे हीरू को और भी अधिक कष्ट पहुँचेगा। आप पहिले उसे यहाँ ले आइये। हीरू को राज़ी करने का भार मेरे ऊपर है।

सुमति की इस विवेचन शक्ति से प्रसन्न होकर आनन्द बाबू चले गये। मा का स्नेह कितना सतर्क है, उसे कितनी दूर की बातें समझने की सामर्थ्य है, इसका परिचय पाकर आनन्द बाबू ने मुग्ध-हृदय से सेवा को नवग्राम लाने के लिये, कलकत्ते को प्रस्थान किया।

छठा परिच्छेद ।

सेवा

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ।
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरं ॥

आनन्द बाबू की नतिनी रेणु और अणु में परस्पर आज झगड़ा हो गया है। बड़ी बहिन से झगड़े में परास्त हो कर अणू ज़ोर ज़ोर से चिल्ला रही है । आनन्द बाबू की स्त्री मोहिनी किसी तरह से उसे शान्त नहीं कर सकती, और उधर छोटी बहिन को धक्का देकर, रेणू प्रसन्न मन से लाइमजूस चूस रही है । बहिन की ओर उसका कुछ ध्यान नहीं, उसकी चिल्लाहट की वह कुछ भी परवाह नहीं करती ।

सेवा स्कूल से लौट कर अपनी फुलवाड़ी में जल सींच रही थी, उसने अणू की चिल्लाहट सुनी । जल की झारी को रखकर वह भागी हुई, मोहिनी के कमरे में आई, उसे देखकर हँसते हुए मोहिनी ने कहा—सेवा ! लड़की किसी भी तरह शान्त नहीं होती !

सेवा ने हँसते हुए अणू के पास जाकर कहा—मेरी प्यारी अणू ! रो मत । मैं तुम्हें एक गुलाब का फूल दूँगी । और एक बहुत अच्छी कहानी भी कहूँगी ।

सेवा की फुलवाड़ी पर अणू और रेणू दोनों ही को लोभ था, वे फूल न पा सकती थीं; इसलिये फूल पाने के लोभवश बालिका ने रोना बन्द कर दिया, किन्तु अभिमान वश एकाएक चुप भी न हो सकी, वह क्रमशः अपना स्वर धीमा करने लगी । इतने में सेवा ने झुक कर फिर कहा—रोती क्यों है बहिन ! अगर चुप न होगी; तो एक फूल जीजी को भी दे दूँगी ।

रेणू सेवा और अरुणू की ओर न देखकर, चुपचाप बैठी हुई थी। मुँह के भीतर लाइमजूस पड़ा था, उसे उसका ध्यान भी न था, किन्तु अब यदि अरुणू चुप न हुई; तो एक फूल उसे भी मिलेगा, यह सुन वह प्रसन्न हुई; और फिर लाइमजूस चूसने लगी। इधर जीजी के फूल पाने की बात सुनकर अरुणू ने भी रोना बन्द कर दिया, और हिचकियाँ लेने लगी।

अरुणू को गोदी में लेकर सेवा ने कहा—अरुणू तुझे गुलाब का फूल दूँगी।

रेणू अब तक चुपचाप बैठी थी, अब जब उसने सोचा कि अरुणू को प्रसन्न करने से मुझे भी एक फूल मिलेगा, तो उसने जल्दी से मुट्ठी खोलकर सारी पुड़िया अरुणू को दे दी; और बोली ले अरुणू! ये सब के सब लाइमजूस! अब तो मुझे भी फूल देगी न?

अरुणू को ढ़ेर के ढ़ेर लाइमजूस मिले, और एक गुलाब का फूल भी मिलेगा, सेवा उसे कहानी भी सुनावेगी। यह देख प्रसन्न होकर अरुणू ने सेवा से कहा, बीबी दीदी—अच्छा जीजी को भी एक फूल देना।

यह देख कर हँसते हुए मोहिनी ने कहा—भाई बीबी, तुझमें वशीकरण की आश्चर्य-जनक शक्ति है। अगर तेरा पति झगड़ालू होगा, तो भी तुझे भय नहीं।

हँसकर सेवा ने कहा—अच्छे सवार हमेशा बदमाश घोड़े पर चढ़ना ही पसन्द करते हैं, मुझे उद्दण्ड एवं अशान्त प्रकृति को वश करने में एक प्रकार का आनन्द आता है।

इसी समय मलिन वेश में आनन्द बाबू ने घर में पदार्पण किया। कुछ मुस्कुरा कर उन्होंने कहा—बीबी इस बार तुझे तेरी इस वशीकारिणी शक्ति की परीक्षा देनी होगी।

सेवा ने हँसते हुए फिर कर देखा—आनन्द बाबू को देख कर वह बोली—ओ माँ! ये तो नानाजी हैं। कब आये नानाजी? हाथ से बैग रखते हुए आनन्द बाबू बोले—बेटी—अभी चला ही आ रहा हूँ।

मोहिनी ने पूछा-हीरू वगैरह की क्या खबर है? कुछ उसाद होकर आनन्द बाबू बोले—बैठो! कहूँ।

सेवा बाहर जाने लगी, पर आनन्द बाबू बोले—ठहरो बीबी! तुमसे कई बातें करनी हैं।

सेवा को बड़ा ही आश्चर्य हुआ, वह वहीं बैठ गई, और अणू से बोली—जाओ बहिन बाहर खेलो। मैं अभी आकर तुम्हे फूल तोड़दूँगी।

दोनो बहिनें खेलने चली गईं। सेवा आनन्द बाबू की ओर देखने लगी।

एक दीर्घ निश्वास लेकर, आनन्द बाबू कहने लगे—हीरू दूसरों के लिये अपना सर्वनाश कर बैठा है।

यह सुन कर सेवा और मोहिनी एक दूसरे का मुँह ताकने लगीं। आनन्द बाबू क्षीण स्वर में कहने लगे, कि उसकी ज़मी-दारी का एक गाँव शीघ्र ही बह जायगा; यहाँ से जाते ही ऐसी खबर उसे मिली। उस दिन सारी रात जाग कर वह इसका उपाय ढूँढ़ने लगा; किन्तु उपाय न मिला, अतः वह स्वयं ही दूसरे दिन वहाँ चला गया, सुमति ने आग्रह करके बहू रानी को भी उसके साथ भेज दिया—फिर साइक्लोन! आन्धी!!

मोहिनी ने उत्कण्ठित होकर कहा—क्या कहा! ज्वार आया था?

आनन्द बाबू बोले—हीरक अच्छा तैरना जानता है, ज्वार होनेपर भी वह बच सकता था—

मोहिनी ने व्याकुल होकर फिर पूछा—क्या वे दोनों ही नहीं बचे ?

कातर स्वर से आनन्द बाबू ने कहा—बहू रानी तो मर गईं, और हीरक की अवस्था भी बड़ी शोचनीय है। उसे पक्षाघात रोग हो गया है।

रोते रोते मोहिनी ने कहा—यह सर्व नाश कैसे हुआ ?

अपने आँसू पोंछते हुए आनन्द बाबू बोले—आँधी से उनकी हवेली गिर पड़ी, उसी के नीचे दोनों दब गये। हीरक को शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार की व्यथा है। अपने पुत्र की यह दशा देख एवं वधू की मृत्यु को सुनकर सुमति भी शय्यागत हुई हैं। वे अब उस शय्या से न उठ सकेंगी, यह निश्चित है। एक मास भी बड़ी मुश्किल से जी सकेंगी।

हीरक को अपनी माता तथा स्त्री से बड़ा मोह है। वह दोनों के मृत्यु-शोक को किसी भी तरह संभाल न सकेगा। सास बहू, मा बेटा, तथा स्वामी एवं स्त्री, इन तीनों के अटूट-प्रेम सम्बन्ध का परिचय पाकर सेवा मुग्ध हो गई। एक अज्ञात परिवार के दुःख से दुखी होकर वह आँसू बहाने लगी।

आनन्द बाबू फिर कहने लगे—अब सुमति के मन में प्रश्न उठा है, कि उसके मरे जाने के बाद हीरू की सेवा शुश्रूषा कौन करेगा ? आँखें पोंछते हुए सेवा ने कहा—क्यों क्या उनके कोई आत्मीय नहीं हैं ? वे अमीर हैं, नर्स ही रख सकते हैं।

आनन्द बाबू बोले—अमीरों के कई आत्मीय बन जाते हैं, किन्तु जहाँ रुपये का स्वार्थ है, वहाँ प्रेम का संपर्क नहीं, ऐसी

हालत में उनकी शुश्रूषा ठीक हो सकेगी, यह कैसे आशा की जाय।

मोहनी ने कहा—इसीसे सुमति दुःख पा रही है? अगर उनका देहावसान हो जायगा, तो उनके पुत्र की कौन सेवा करेगा? वहाँ के नौकरों को देख रेख कौन करेगा? इतनी भारी ज़मीदारी का काम कौन चलायगा?

इस बार उत्तेजित होकर सेवा ने कहा—चलायगा कौन? उन्हें चलायगी; उनकी धर्म बुद्धि, उनकी कर्तव्य बुद्धि, और कौन? मोहनी ने कहा—सभी आदमी कर्तव्य-परायण और धर्म-भीरु थोड़े ही होते हैं? आवेश में आकर सेवा कह उठी अगर मैं होती, तो किसी को मालूम भी न होने देती, कि मैं रोगी की सम्बन्धिनी या आत्मीया नहीं हूँ।

व्यग्र होकर जल्दी जल्दी आनन्द बाबू बोले—बेटी! तब तुम्हीं न चली चलो, यदि तुम इस पुण्य-कार्य को कर सकोगी, तो नवग्राम की सारी ज़मीदारी तुम्हारी हो जायगी। और तुम उसकी स्वामिनी होगी। तुम्हारे साथ यही बातें करने को मैं यहाँ आया हूँ!

मोहिनी ने चकित होकर आनन्द बाबू की ओर देखा, और सेवा ने एक अनिर्वचनीय लाभ की आशा में उत्फुल्ल होकर कहा—क्या उनके यहाँ फुलवाड़ी भी है?

व्यथित हँसी की रेखा को ओठों ही में छिपाकर आनन्द बाबू ने कहा—उद्यान में ही तो उनकी हवेली है। अगर तुम्हारी इच्छा होगी, तो और भी बहुत से उद्यान वहाँ बनवा दूँगा।

अकस्मात् सेवा ने गम्भीर होकर कहा—क्या मैं! अपने लिये, अपने सुखों के लिये, उनके रुपये ख़र्च कराने जाऊँगी। नहीं, यह कभी नहीं हो सकता।

आनन्द बाबू बोले—वे तुम्हारे लिये सारी उम्र रहने का

प्रबन्ध कर देंगे, इसके बदले जितने दिन हीरू जीता रहे, तुम्हें अपनी ममता से, उसके दुःखको घटाने की चेष्टा करनी होगी। वे यही बदला चाहते हैं।

सेवा ने उत्फुल्ल होकर कहा—ले चलो नानाजी! अगर भगवान ने चाहा, तो जल्दी ही मैं उन्हें स्वस्थ कर दूँगी।

खुश होकर आनन्द बाबू ने कहा—तो तुम्हारा सामान बाँध लो। आज ही रात को आठ की गाड़ी से चलेंगे। मैं जाकर एक तार दे आता हूँ।

आनन्द बाबू चले गये, मोहिनी ने कहा—तो बेटी अब और देरी मत लगाओ। जो कुछ साथ ले जाना हो झट से बांध लो।

सेवा धीरे धीरे कमरे से बाहर निकली। सेवा को आते देख कर अनू रेणू दोनों उससे लिपट गईं, और बोलीं—बीबी दीदी! चलो, हमें फूल दो, कहानियाँ कहो।

बड़े प्रेमसे उनके गुलाबी गालों को चूमते हुए सेवा ने कहा— तुम दोनों जाकर जितने फूल चाहिये, तोड़ लो, और नानी जी से कहानी सुन लो, मुझे अभी बाहर जाना है।

अनू रेणू अवाक् हो गईं, उन्हें बड़ा विस्मय हुआ—आज यह क्या? बीबी दीदी! जिसकी फुलवाड़ी के फूलों को वे छूने तक न पाती थीं, आज एक दम ही वहाँ इच्छानुसार फूल तोड़ लेने की आज्ञा! बालिकाओं के सरल-हृदय में यह विस्मय अधिक देर तक न ठहर सका, थोड़ी ही देर में आनन्द ने पूर्णतया उनके हृदयों पर अपना कब्ज़ा जमालिया। अपने खुले बालों को लहराती हुई वे फुलवाड़ी की ओर दौड़ीं।

सेवा ने अपने कमरे में जाकर बक्स खोला, क्षणिक उत्ते-जना के दूर होने पर बीसियों तरह की चिन्ताओं ने आकर

उसे घेर लिया। सेवा खुले बक्स के सामने बैठ, गम्भीर चिन्ताओं में निमग्न हो गई।

थोड़ी ही देर में आनन्द बाबू कमरे में आये। सेवा को गम्भीर होकर बैठी देख उन्होंने पूछा—बेटी! सामान ठीक कर लिया न? अच्छा चलो, कुछ खा पी लो।

सेवा ने उदास होकर कहा—नानाजी! मैं नहीं चलूँगी।

उत्कण्ठित होकर आनन्द बाबू ने कहा—क्यों? क्या हुआ?

सेवा ने एक साँस लेकर कहा—उनके यहाँ की अवस्था जैसी आपने कही, उससे जान पड़ता है, कि वहाँ जाते ही वहाँ का सारा भार मुझे उठाना पड़ेगा। दुनियाँ के लोग कहेंगे, कि देखो रुपये के लालच में आकर इसने यह काम करना मंजूर किया है।

आनन्द बाबू बोले—तुम्हारी उनकी इतनी जान पहचान तो है ही नहीं, कि तुम निश्वार्थ भाव से उसकी शुश्रूषा किया करो। जो तुम दूसरे का कार्य करोगी, उसका मूल्य तुम्हें लेना ही होगा। तुम भी तो नर्स बनना चाहती थी? कार्य आ गया है, इस सुअवसर को छोड़ना अच्छा नहीं।

सेवा गम्भीर हो कर सोचती ही रही। आनन्द बाबू फिर बोले-देखो बेटी! अब और बातें मत करो। मैं तार भी दे आया हूँ—वहाँ तुम्हारी जरूरत है। तुम उनकी सेवा करने चलो। वहाँ जाकर तुम अपना नाम कृतार्थ करना। हाँ, वेतन भले ही मत लेना, तुममें एक ऐसी अमूल्य वस्तु है, जो वेतन से प्राप्त नहीं हो सकती। घड़ी की ओर देखते हुए आनन्द बाबू बोले—छः बज चुके हैं। चलो, बेटी! उठो।

रसोई घर से मोहिनी ने पुकारा—सेवा! नानाजी को लेकर जल्दी आओ, खाना तयार है।

सेवा दीर्घ निश्वास लेकर खड़ी हो गई, और बोली—आप चलिये; मैं आई ।

आनन्द बाबू चले गये—सेवा भी बक्स ठीक करने लगी, सब सामान बाँध कर वह जल्दी जल्दी रसोई घर में पहुँची ।

सातवाँ परिच्छेद ।

पदार्पण

आई क्या तू सतनु उड़के स्वर्ग की वाटिका से ।
भोगैश्वर्य-प्रणय—सुख का त्याग सारा सुवास ?

सेवा प्रातःकाल ही नवग्राम पहुँच गई । हीरक के मकान की शोभा देख कर उसका मन खिल गया । उसने देखा; कि सुन्दर तस्वीर के समान; मकान के बीच में एक सजा हुआ उद्यान है । उसकी गाड़ी जब लाल मिट्टी से ढकी हुई सड़क पर पहुँची, तब नाना प्रकार के फल फूलों से लदे हुए वृक्षों ने उसका स्वागत किया । इस पुष्पाच्छादित बागीचे का अब वही उपभोग करेगी, इस सम्भावना से उसका हृदय खिल गया । गाड़ी से उतर कर सेवा ने जब मकान में प्रवेश किया, तब उसके हृदय में एक प्रकार की धकधकाहट सी हुई । उसने देखा—सारा मकान सफेद संगमरमर का बना हुआ था, उस पर पालिश की हुई थी, जिससे वह काँच की तरह झकझक करता था । मकान में कहीं भी कोई वस्तु इधर उधर पड़ी हुई न दिखाई देती थी, सब वस्तुए, यथास्थान रक्खी हुई थीं । कहीं पर भी गोलमाल न सुनाई देता था । दास दासी चुपचाप

कार्य कर रहे थे; सेवा इससे जान गई; कि इस मकान के स्वामी बड़े ही चतुर एवं प्रबंध-प्रिय हैं। इसी कारण उनके बीमार रहने पर भी व्यवस्था में अन्तर नहीं होने पाया है। नौकरों को इस तरह दिल लगा कर कार्य करते देख कर मालूम होता है, कि इस मकान के स्वामी या तो अत्यंत स्नेहमय हैं अथवा, अत्यंत कठोर हैं।

इतने में लोकनाथ ने आकर सेवा का सामान वगैरह उतरवा कर निर्दिष्ट स्थान पर रख दिया, एक दासी ने आकर सेवा से नम्र स्वर में कहा ! ऊपर चलिए ?

सेवा शर्माती हुई, संगमरमर निर्मित विशाल सीढ़ियों पर पैर रख कर जैसे जैसे ऊपर चढ़ने लगी, उसका हृदय धकधक करने लगा। कहाँ उसकी अनाथावस्था, एवं कहाँ यह अमीरों के उपभोग की सुख सामग्रियाँ ! वह हर पद पद पर मकान में प्रवेश करते करते सोचती जाती थी, यहाँ की स्वामिनी किस तरह से मेरा स्वागत करेंगी ? मैं उन्हें प्रसन्न कर सकूँगी, या नहीं ? इस स्थान पर मुझे कितने दिनों तक रहना पड़ेगा। इसी तरह के विचार उठने लगे। आनन्द बाबू ने कहा था, कि वहाँ आजन्म सुख से रह सकोगी। सेवा का हृदय अभी तक सादा है, उसने अपने हृदय पर अधिकार जमाने लायक एक भी युवक नहीं पाया था। आज उसके दारिद्र्य दुःख के मिटने की संभावना ने, एवं सुन्दर उद्यान पाने की आकाँक्षा ने, उसके हृदय में एक नूतन आशा का संचार करा दिया था। सेवा का यौवन अकस्मात् उसकी निराश्रयता से, एवं प्रणय के दारिद्र्य के कारण व्यथित हो उठा। रूपकथा में जैसे शून्य सिंहासन के लिये उचित पात्र खोजने को राजहस्ती देश देशान्तरों में फिरने निकला था, ठीक उसी प्रकार सेवा का मन भी देश

देशान्तर में फिर कर किसी योग्य परिचित पुरुष को ढूँढने लगा; किन्तु कोई भी न मिला ।

उसकी चिन्ता में बाधा देते हुए दासी ने पूछा—आप पहिले स्नान करेंगीं; या माँके पास चलेंगीं ?

सेवा चौंक उठी । उसके विचारों की गति रुक गई । कुछ ठहर कर उसने पूछा—माँ कहाँ हैं ?

दासी ने तर्जनी द्वारा कमरा दिखाते हुए उत्तर दिया, कि इस कमरे में तो माँ हैं, और इसके बराबर वाले में बाबू हैं। और यह कमरा आपके ठहरने के लिये है ।

अपने निर्दिष्ट कमरे में जाकर सेवा एक टेबिल आयने के सामने खड़ी होकर अपना चेहरा देखने लगी । सारी रात सफ़र करने से उसका मुँह कुछ सूख गया था, एवं पोशाक मैली सी हो गई थी । एक अपरिचित व्यक्ति से इस वेष में मिलते हुए सेवा को बड़ी लज्जा मालूम होती थी, उसने दासी से पूछा—स्नान घर कहाँ है ? मैं स्नान करके माँ से मिलूँगी ।

दासी ने स्नान घर बतला कर उसके नहाने का पूरा प्रबंध कर दिया ।

सेवा स्नान कर चुकी—अपनी भीगी हुई केश राशि को पोंछ कर उसने अपनी पीठ पर फैला दिया, एवं स्वच्छ वस्त्र पहिन कर सुमति से मिलने चली । किसी के पैरों की आहट पाकर सुमति ने दरवाज़े की ओर देखा । सेवा को देखकर मृदुस्वर से बोली-आओ बेटी ! आओ ।

सेवा ने शय्यापर लेटी हुई सुमति के चरणों को स्पर्श किया । सुमति ने तीक्ष्ण दृष्टि से सेवा को एक बार आपाद मस्तक देखकर पूछा—रात की गाड़ी से आने में किसी प्रकार की तकलीफ़ तो नहीं हुई ?

सिर हिलाकर कोमर स्वर से सेवा ने कहा—नहीं ।

सुमति ने कहा–तुम तो बड़ी अच्छी लड़की मालूम होती हो ?

इस प्रश्न से सेवा के मुख पर कुछ हँसी की झलक आगई । लज्जा एवं कौतुक मिश्रित रेखाएँ उसके मुख पर नाचने लगीं । कुछ उत्तर न देकर उसने अपने उज्ज्वल नेत्रों को झुका लिया ।

इस तरह की सुन्दरी युवती; सुमति ने पहिले कभी नहीं देखी थी । उसका मन मुग्ध हो गया । उसे देख रमा की याद आगई । सुमति रमा के सौन्दर्य से इस सौन्दर्य की तुलना करने लगी । सुमति ने सोचा, इसको देखते ही हीरू भी अवश्य मुग्ध हो जायगा । उसने हाथ बढ़ाकर कहा—बेटी ! तुम मेरे पास आओ ।

सेवा सुमति के पास गई । सेवा का हाथ पकड़ कर अपने पास बिठलाते हुए सुमति ने कहा—बहुत दुःख के समय तुम्हें बुलाया है । मैं कैसे तुम्हारा स्वागत करूँ ? तुमारे ही ऊपर हमारी परिचर्या का भार है । यहाँ की सब वस्तुयें, सारे दास दासी; तुम्हारे ही हैं । तुझे ही इन सब का नियम पूर्वक परिचालन करना पड़ेगा । बेटी ! संकोच न करना, मैं निराधार हो गई थी, अब तुम्ही मेरी आधार हो ।

रमा की याद करके सुमति आँसू बहाने लगी । सुमति के स्नेह में आर्द्र और आकृष्ट होकर; सेवा ने सजल नेत्रों से अपने आँचल द्वारा सुमति की आँखों को पोंछकर कहा—मैं भी बचपन से मातृहीन हूँ ! मुझे भी माँ प्राप्त हुई ।

सुमति ने उसकी बात, बीच ही में काटकर कहा—यह क्या, मिलने में मिलना है ? बेटी ! मेरी तो आख़िरी घड़ी आ पहुँची है । जिस बच्चे को असहाय छोड़ जाऊँगी; उसकी तुम्हें रखवाली करना होगा । उसका सार भार उठाना होगा ।

अब सेवा को हीरक की याद आई, उससे मिलने के लिये वह व्यग्र हो उठी। आँखें फिराकर उसने हीरक के कमरे की ओर देखा।

यह देखकर सुमति ने कहा—हाँ, इसी कमरे में वह अक्षम होकर पड़ा हुआ है। रात दिन उसकी आँखें आँसुओं से भीगी रहती हैं। बेटी! यत्न से, ममता से, स्नेह से, प्रेम से, आकर्षण से, आश्वासन से, जिस तरह से भी हो सके, उसे भला चंगा कर दो।

हीरक के दुःख से व्यथित होकर, सेवा ने दीर्घ-निश्वास लेकर कहा—माँ! जहाँ तक बन पड़ेगा, कोशिश करूँगी।

क्रन्दन व्यथित स्वर से सुमति बोली—वह पास ही के कमरे में पड़ा है। तुम वहाँ जाकर उससे मिल आओ; देखो बेटी! शरमाना नहीं। कामिनी! इसको उस कमरे तक पहुँचा दे।

सेवा व्यग्र, उत्कण्ठित, एवं संकुचित मन से शनैः शनैः हीरक के कमरे की ओर चली। ज्योंही सेवा कमरे में पहुँची, हीरक ने आँखें फिराकर उस ओर देखा। एक अपरिचित युवक युवती का प्रथम सम्मिलन हुआ। दोनों के नेत्र विस्मय से परिपूर्ण थे। सेवा ने अनुमान किया था, कि वह अमीर साहबज़ादा रोग की यंत्रणा से कराहता हुआ, हतश्री होकर पड़ा होगा; किन्तु उसने देखा—कि बिछौने पर लेटे हुए युवक के मुख पर उसके रोगी होने तक का कोई चिन्ह नहीं है। उसका मुख बालक की तरह सुन्दर एवं सरल है, और उससे दृढ़ता के भाव स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। उसके बड़े बड़े बाल रुक्ष होने से उठे हुए हैं। वास्तव में युवक सुन्दर है। सेवा ने हीरक के विषय में जिस तरह की कल्पना की थी, वैसा न पा, तथा उसकी सुंदरता देख, उसके मन में बड़ा विस्मय हुआ। हीरक,

एक अपरिचिता सुन्दरी को अपने सामने आते देखकर बड़ा विस्मित हुआ। सेवा का रंग विशेष गोरा न था, किन्तु उसके चेहरे की तेजस्विता, यौवनावस्था का लावण्य, ओठों की लाली, नेत्रों की सुंदरता तथा वस्त्र पहनने की चतुराई, और शिक्षिता होने के गम्भीर भाव मुख पर देख, हीरक समझ गया; कि यह कोई साधारण युवती नहीं है। एक अपरिचित युवक से भेंट करने से सेवा के कपोलों पर लाली, एवं मुख पर विस्मित आनंद की आभा झलकने लगी। सेवा के रूप लावण्य ने हीरक को मुग्ध कर दिया। उसके सँवारे हुए बालों को देखकर, हीरक को विख्यात अंग्रेजी उपन्यास लेखिका, जार्ज ईलियट की याद आ गई। क्षणिक समय में ही दोनों के हृदयों में जो जो भाव उत्पन्न हुए, वे स्पष्टतया मुखों पर झलकने लगे। वास्तव में दोनों एक दूसरे को सुंदर जँचे।

विस्मय के प्रथम मुहूर्त को पार करके हीरक ने ही पहिले मौन भङ्ग किया—उसने कहा—मैं पक्षाघात से अधमरा होकर पड़ा हूँ, मुझमें सामर्थ्य नहीं, कि मैं उठकर आपकी अभ्यर्थना कर सकूँ। मेरी धृष्टता आप क्षमा करें। हीरक ने पहिले ही बात छेड़ दी; इस हेतु सेवा को संकोच करने का अवसर ही न मिला। उसने कोमल एवं मृदुस्वर से कहा—आप मेरी चिंता न करें, आपकी बिमारी का हाल सुनकर ही मैं आप से मिलने आई हूँ।

हीरक सेवा के साथ बातचीत करता करता मन में सोचता जाता था, कि यह युवती कौन हो सकती है? बहुत सोच कर उसने पूछा—क्या आप ही का शुभ नाम सेवा है?

लजा कर सेवा ने उत्तर दिया—हाँ।

म्लान मुख से हीरक ने कहा—आप ऐसे समय में आईं

हैं, कि आपकी अभ्यर्थना भी कोई न कर सका। माँ भी बीमार हैं, और मैं भी मृत्यु शय्या पर पड़ा हूँ, और एक जो थी; वह हमें छोड़ कर चली गई ।

रमा की याद आते ही हीरक की आँखें भर आई; एक अपरिचित रमणी के सन्मुख भी वह अपना शोक न छिपा सका।

सेवा जल्दी से उसके बिछौने के पास आ खड़ी हुई। किन्तु पत्नी के शोक से विव्हल युवक को वह कैसे सान्त्वना दे, यह ठीक सोच न सकी। वह कमरे में चारों ओर नजर फिरा कर देखने लगी, एक जगह उसने एक अंगरेजी अखबार पड़ा हुआ देखा। अभी तक वह बन्द ही पड़ा था। साथ ही कई चिट्ठियाँ और अखबार भी वहाँ पड़े थे। हीरक को उनका ध्यान भी न था; न उसमें इतनी सामर्थ्य ही थी, कि वह उसे उठाकर पढ़ सके। कोई पढ़कर सुनाने वाला भी न था। लोकनाथ रोज की डाक रख जाया करता था; वह वैसे ही पड़ी रहती। दूसरे दिन वह उसे उठा ले जाता; और ताजी चिट्ठियें रख जाता था।

हीरक का मन फेरने के लिये सेवा ने पूछा—क्या आपको अखबार पढ़कर सुनाऊँ ?

हीरक ने हताश हो कहा—अखबार ! मैं अखबार सुनकर क्या करूँगा ? इस संसार से मैं निर्वासित सा हो चुका हूँ। हाँ, आप चाहें तो पढ़ सकती हैं। सेवा ने अखबार उठाया, हीरक ने फिर कहा—अच्छा, तो जोर से ही पढ़िये।

सेवा मोटे मोटे हरफों में छपा हुआ एक एक शीर्षक पढ़कर सुनाने लगी। जिस शीर्षक को सुनकर हीरक प्रसन्न होता था, उन समाचारों को वह पढ़ने लगी।

बहुत देर बाद हीरक ने पूछा—आज क्या तारीख है ?

सेवाने हीरकके कथनानुसार लेख पढ़ सुनाये; हीरकने ऐसी स्त्रीको कभी न देखा था जो एक मित्रकी भांति इतनी खूबीके साथ मनके भावोंको समझा सके। (पृष्ठ ६२)
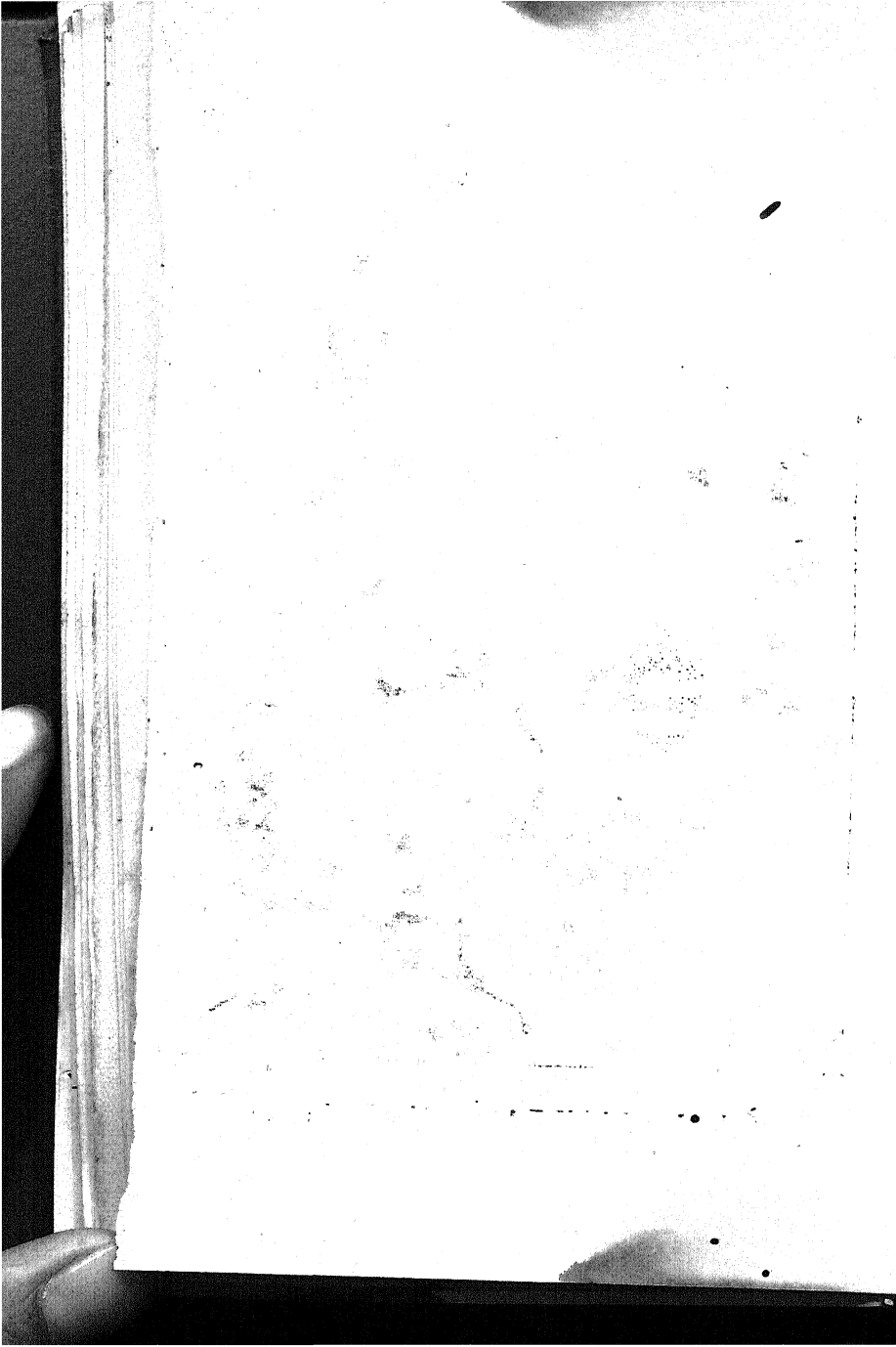
कुछ सोच कर सेवा ने कहा—तीन तारीख ।

उत्सुक होकर हीरक ने पूछा—आज "प्रभा" आयी होगी, देखिये तो ।

डाक से प्रभा निकाल कर सेवा ने कहा, हाँ—आयी है ।

पढ़िये तो ! देखें कौन कौन से लेख हैं । सेवा विषयानुक्रमणिका पढ़ने लगी ।

पाथरगोला की काल रात्रि के बाद; आज सबसे पहिले हीरक ने पत्र सुनने में मन दिया । पास के कमरे में छिपकर लोकनाथ ने यह सब देखा । आज कई दिनों के बाद उसके मुखपर प्रसन्नता की हलकी सी आभा दिखाई पड़ी । हीरक के दूध पीने का समय हो चुका था । लोकनाथ गरम दूध गिलास में लेकर खड़ा हुआ था, किन्तु हीरक के इस नव मिलन में उसने बाधा देना उचित नहीं समझा ।

सेवा ने हीरक के कथनानुसार लेख पढ़ सुनाये, हीरक ने ऐसी स्त्री को कभी न देखा था; जो एक मित्र की भाँति इतनी खूबी के साथ, मन के भावों को समझ सके । स्त्रियाँ भी बर्तन बासन, पूरी तरकारी, परनिन्दा; परश्लाघा को छोड़कर दूसरे व्यक्ति के हृदय में एक उच्च भावना उत्पन्न कर सकती हैं, यह हीरक को आज ही ज्ञात हुआ । इस नूतन मिलन से हीरक के चेहरे पर प्रसन्नता के भाव दिखाई दिये । हीरक कुछ दिनों से संसार के आमोद प्रमोदों से विलग होकर अपने शोक ही में पड़ा था, आज अकस्मात् एक देवबाला के सहवास से उसे बहुत आनन्द हुआ ।

इतने में दीवार पर लगी हुई घड़ी ने टन टन करके ११ बजाये । हीरक ने आँखें उठाकर घड़ी की ओर देखा । हीरक ने कुछ लज्जित एवं विरक्त होकर कहा—ऊहः बड़ी देर हो गई,

मैंने आपको बड़ा दुःख दिया, मुझे इतनी देर हो जाने का खयाल भी न था । आपने अभी तक कुछ जलपान भी न किया । आज न जाने सारे नौकर कहाँ मर गये । इस घर में आप ऐसे दुःख के समय में क्यों आई ?

सेवा कुछ कहना ही चाहती थी, कि कपाल और भ्रू सिकोड़ कर हीरक ने तीव्र स्वर से पुकारा—कोई है क्या ? लोकनाथ दादा ?

सेवा ने हीरक को पुकारते हुए देख घबरा कर कहा—आप चिन्ता न करें, मैं अभी बुलाये देती हूँ ।

लोकनाथ बराबर के कमरे में खड़ा हुआ जाने की प्रतीक्षा कर रहा था । चाँदी की तश्तरी में एक गिलास को रख कर हीरक के कमरे में आया ।

हीरक ने फिर चिल्ला कर कहा—आज तुम कहाँ मर गये थे ?

लोकनाथ कुछ न बोला—सेवा ने कुछ उदास होकर उतावले स्वर से कहा—आपने सबेरे से कुछ नहीं खाया, मैं नहीं जानती थी । मेरे यहाँ रहने से यह यहाँ न आया । मुझे क्षमा करें । मैंने बड़ी भूल की । कलसे कुछ गड़बड़ी न होगी ।

सेवा को इस तरह कहते देखकर हीरक शान्त हो गया । सेवा के इस शब्द पर कि "कल से कुछ गड़बड़ी नहीं होगी" वह विचार करने लगा, इससे सेवा का क्या अभिप्राय था ? क्या वह नाराज हो गई है ! इसीसे शायद वह कल ही चली जायगी । हीरक अपने इस आचरण से बड़ा असन्तुष्ट हुआ और चुप हो गया ।

सेवा ने लोकनाथ के हाथ से दूध का गिलास लेकर हीरक के मुख के पास ले जाते हुए कहा—आप दूध पी लीजिये । इस गिलास से कैसे पियेंगे ?

लोकनाथ बोला—गले में हाथ डालकर थोड़ा उठाना पड़ेगा ?

सेवा ने लोकनाथ से पूछा—क्या यहाँ फीडिंग कप नहीं है ?

हीरक ने कहा—था तो सब कुछ, और है भी। कोई ढूंढ़ कर लावे तब न ? ख़ैर मेरी आयु में और जितने दिन बाक़ी हैं, वे भी इसी तरह से निकल जायँगे।

हीरक की बातचीत से, रह रह कर जो निराशाजनक ध्वनि निकलती थी, उससे सेवा ने दुःखित हो कर हीरक को सान्त्वना देते हुए कहा—आप इतने हताश क्यों होते हैं ?

म्लान हँसी हँस कर हीरक ने कहा—और आशा भी मैं अब किसकी करूँ ?

सेवा ने कहा—बीमारी तो सभी को होती है, आप भी शीघ्र ही अच्छे हो जायँगे।

हीरक ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—अब अच्छा कैसे हो सकूँगा ? मेरा अच्छापन तो सब जाता रहा।

हीरक का शोक बढ़ते देख कर, बात टाल कर सेवा ने कहा—आप दूध पी लें, वरना ख़राब हो जायगा।

सेवा ने हीरक के मुख के पास झुक कर, हीरक के गले में एक स्वच्छ टुवाल डाल दिया। और बायें हाथ को उसके गले में डाल कर हीरक को कुछ ऊँचा उठा दिया। फिर दाहिने हाथ से दूध के गिलास को उसके मुख के पास ले गई। सेवा ने अनेक रोगियों को अस्पताल में सेविका का कार्य करते समय इसी तरह उठाया था, किन्तु आज एक सुंदर युवा को अपनी भुजाओं पर उठाते हुए उसका चेहरा लज्जा एवं संकोच से लाल हो गया। हीरक को भी जान पड़ा, कि इस सुन्दर युवती का बाहु-वेष्टन अत्यंत कोमल एवं सरस है। लज्जा से

उसके हाथ काँप रहे हैं। उसके मुलायम एवं चमकीले बाल हवा से अठखेलियाँ करते हुए, उसके सरस कपोल एवं स्तनों को चूम रहे हैं। आज के दूध से हीरक को एक प्रकार की तृप्ति ही नहीं; वरन् शान्ति भी मिली। हीरक जब दूध पी चुका, तब सेवा ने फिर धीरे धीरे उसका सिर तकिये पर रख दिया। हीरक ने सोचा, अगर रमा होती, तो वह भी इसी प्रकार सेवा करती, रमा की याद आते ही उसकी आँखें डबडबा आईं। उसने एकान्त में रोकर शान्ति प्राप्त करने के लिये, सेवा से कहा—कि आप जाकर खाना खावें, और कुछ देर के लिये विश्राम करें। लोकनाथ दादा! ले जा इन्हें; और कामिनी से कह दे, कि हर समय इन्हीं के पास रहा करे।

इतना कहते कहते हीरक का गला रुंधने लगा। सेवा ने यह देख कर कहा—आप मेरी चिन्ता न करें। मैं अपना प्रबन्ध आप ही करलूँगी। हीरक ने आर्द्र स्वर से कहा—हाँ। तो मेरे ऊपर बड़ी कृपा होगी। आप लज्जा न करें। लोकनाथ दादा! लेजा इनको।

लोकनाथ के साथ सेवा चली गई। हीरक फूट फूट कर रोने लगा। हीरक स्वयमेव न जान सका, कि यह रोना किस लिये था? रमा के अभाव में ही वह रोया था। उसके साथ ही साथ अपनी हार्दिक दुःख एवं सेवा के आतिथ्य सत्कार में त्रुटि की लज्जा भी मिली हुई थी। एक अपूर्व वर्णनातीत भाव भी उसके क्रन्दन में छिपा था।

सेवा ने बाहर आकर लोकनाथ से हीरक एवं सुमति की दिनचर्या के बारे में कई प्रश्न किये। लोकनाथ ने सबका यथेष्ट उत्तर देकर उसका सन्तोष किया। सेवा ने उससे कहा—अच्छा तो मैं माँ से मिल आती हूँ, तुम बाबू के पास जाओ।

सेवा और लोकनाथ में जो जो बातें हुई; वह हीरक ने सुनीं। सेवा के यत्न एवं आग्रह से वह सन्तुष्ट हुआ, किन्तु उसका मन रमा के अभाव से और भी अधिक दुखित होने लगा। हीरक के कमरे में कोई भी न था। हीरक फूट फूट कर रोने लगा। इधर सेवा सुमति के कमरे की ओर गई। सेवा जब वहाँ गई; तो उसने देखा; कि सुमति तो बिछौने पर लेटी हुई थी, और वृद्ध आनन्द बाबू उसके पास ही एक कुर्सी पर बैठे हुए थे। वे सुमति से पूछ रहे थे, सेवा को देख लिया न? कैसी है, उसके बारे में आपने क्या सोचा है?

सुमति ने उत्तर दिया—लड़की तो अच्छी है; और हीरू के पास भेजा है। हीरू को भी वह बड़ी अच्छी लगी है, ऐसा जान पड़ता है। देखो न, सेवा का अख़बार पढ़ना स्थिर हो कर सुन रहा है

आनन्द बाबू ने पूछा—क्या आपने विवाह के बारे में उससे कह दिया?

सुमति ने धीरे धीरे कहा—अभी नहीं! कुछ दिन ठहर कर बात छेड़ना ठीक होगा।

इसी समय सेवा कमरे में आई। सेवा को देख कर आनन्द बाबू ने खड़े खड़े सुमति से कहा—अच्छा जाता हूँ, एक बार हीरक से भी मिल आता हूँ।

जाते जाते उन्होंने सेवा से कहा—बेटी! यहाँ पर कुछ शर्म न करना! यहाँ की अवस्था देखी न! यह मकान, घरबार, दास दसी, पुष्पोद्यान, सब तुम्हारे ही हैं, डरना नहीं।

सेवा ने उत्तर में केवल मुस्कुरा दिया। आनन्द बाबू चले गये। सेवा सुमति के पास जाकर खड़ी हो गई। उसे देखकर स्नेह भरे स्वर से सुमति ने कहा—आओ बेटी! आओ! इतना

समय हो गया, तुमने अभी तक कुछ न खाया ? कामिनी को पुकारो तो !

सेवा—आप मेरे लिये चिन्ता न करें। क्या आप लोगों ने औषधि ले ली ? कब लेते हैं ?

सुमति—बेटी ! क्या मालूम ! लोकनाथ जाने। वही यह सारा कार्य करता है, उसीसे पूछ लेना। यहाँ कार्य करते करते ही उसने बाल पकाये हैं। मेरे हीरू को भी उसीने पाल पोसकर इतना बड़ा किया है। हीरू उसे लोकनाथ दादा कहता है, बहू भी उसे "दादा" कहा करती थी।

सेवा ने सुमति के उद्देश्य एवं इच्छा को समझकर कहा—तो मैं भी उन्हें "दादा" कहा करूँगी।

इतने ही में कामिनी ने आकर सेवा से कहा—दीदी ! भोजन तैयार है।

सुमति—कामिनी ! मेरे कमरे में ही दो आसन बिछा दे। सेवा ! तुम आनन्द बाबू के सामने भोजन करती हो न ?

सेवा—हाँ !

कामिनी भोजन लेने चली गई। लोकनाथ ने आकर एक चाबियों का गुच्छा सेवा के सामने रख दिया, और कहा—ये सब चाबियाँ लीजिये। यहाँ पर के सब बक्स, आलमारियाँ एवं दराज़ों की चाबियाँ इसीमें हैं।

सेवा ने चकित होकर सुमति की ओर देखा—सुमति ने कहा—ये सब चाबियाँ बहू ही रखती थी, बेटी ! अब तुम्हें रखना होगा। तुम सब देख दिखा लेना, जिससे मेरे हीरू को किसी प्रकार का अभाव न हो। समझी न ?

लोकनाथ की आँखें भर आईं। सुमति ने संकेत द्वारा उसे

अपने पास बुला कर कहा—लोकनाथ—जा, हीरू के कमरे में से आनन्द बाबू को भेज दे। खाना तैयार है।

लोकनाथ ने जाकर आनन्द बाबू को ख़बर दी, वह उठ खड़े हुए। हीरक ने निश्वास लेकर पूछा—बाबू जी! क्या आज ही आप लोग चले जायँगे ?

आनन्द बाबू ने उसके कपाल पर हाथ फेरते हुए कहा—नहीं बेटा! तुम्हें इस हालत में छोड़कर मैं कहाँ जाऊँगा ?

कुछ सोचकर हीरक ने पूछा—सेवा भी अभी यहीं रहेंगी?

आनन्द बाबू—हाँ तेरी बड़ी माँ को भी ले आने का विचार है। हीरक ने खुश होकर कहा—आप लोग यहाँ रहेंगे; तो बहुत अच्छा होगा।

आनन्द बाबू ने कहा–यहीं तो रहता हूँ!

हीरक ने कुछ न कहा, केवल मुस्कुरा दिया।

आठवां परिच्छेद।

"आई हूँ तेरे दरपै तो कुछ करके उठूँगी!"

सुमति के कमरे में सेवा और आनन्द बाबू भोजन कर रहे थे। रसोइया उन्हें परोसकर हीरक को भोजन कराने चला गया। हीरक को खिलाते खिलाते कुछ चावल हीरक के मुख में न जाकर, उसके कपड़ों पर जा गिरे। इस पर हीरक क्रुद्ध होकर चिल्लाने लगा—क्या तुझे कुछ भी नहीं दिखता? अन्धा है क्या? सारे बदन पर चावल ही चावल कर दिये। ले जा तेरे चाँवल, मुझे भूख नहीं है।

बिचारा ब्राह्मण डर गया। उसने डरते डरते कहा—और थोड़ा खा लीजिये बाबू! कुछ भी तो नहीं खाया—

क्रुद्ध होकर हीरक ने कहा—कह दिया, एक बार सुनता नहीं। लेजा तेरा भोजन,......मैं अब नहीं खाता! बस......।

ब्राह्मण ने फिर कातर स्वर से कहा—अब ऐसी ग़लती नहीं होगी, बाबू!

हीरक ने उत्तेजित होकर कहा—जाता है कि नहीं?

सुमति के कमरे तक हीरक की आवाज़ सुनाई देती थी, सेवा खाना छोड़कर कान लगाकर सुनने लगी। उसने आनन्द बाबू से पूछा—नानाजी! क्या मैं उन्हें जाकर भोजन करा आऊँ?

आनन्द बाबू ने देखा कि सेवा थाली छोड़कर उठा ही चाहती है, उसके इस आग्रह से प्रसन्न होकर उन्होंने कहा—हाँ, भले ही उठो।

अनुमति पाकर सेवा कमरे से बाहर चली गई। आनन्द बाबू ने प्रफुल्ल होकर सुमति की ओर देखा—उन्होंने देखा कि सुमति का चेहरा आनन्द से खिल उठा है। सेवा जल्द आचमन करके हीरक के कमरे में घुसी; इधर ब्राह्मण महाशय फटकार खाकर मलीन मुख से बाहर आने की चेष्टा कर रहे थे! सेवा ने कमरे में जाकर पूछा—क्यों? क्या हुआ?

कुछ अप्रतिभ होकर हीरक ने कहा—देखिये न! सारे बदन पर चावल ही चावल डाल गया।

सेवा—सोते हुए खाने से तो कुछ चावल गिरेंहीगे। ऐसे समय एक तौलिया छाती पर डाल देना चाहिये, उससे न कपड़े ही ख़राब होंगे; न बिछौना ही। जो कुछ गिरेगा, उसी पर गिर जायगा। लोकनाथ दादा! एक साफ़ टुवाल एवं बड़ा चम्मच ले आओ।

कुछ हँसकर हीरक ने कहा—ये गँवार लोग हाथ ही से अच्छी तरह नहीं खिला सकते, फिर चम्मच से क्या इनका सिर खिलायेंगे ।

कुछ संकुचित होकर सेवा ने कहा—मेरे हाथ का तो शायद आप नहीं खायँगे, वरना मैं स्वयं ही आपको खिला देती ।

हीरक एक कुलीन हिन्दू था । आज तक उसने अन्य जाति के हाथ का छुआ जल तक न पिया था, और न ऐसा कोई मौक़ा ही आया था । उसने इस विषय पर विचारा भी न था । आज सेवा की इस बात को सुन कर वह सोचने लगा । उसके मन में यह समस्या प्रबल हो उठी; सेवा एक युवती स्त्री है, साथ ही साथ एक सद्यः परिचिता एवं अभ्यागता अतिथि सेवा को; किसी भी प्रकार हीन एवं तुच्छ मानने में; हीरक को बड़ी लज्जा बोध हुई । उसके अन्तः करण में इससे बड़ी व्यथा हुई । उसने कहा—किसने कहा, कि मैं आपके हाथ का छुआ भोजन नहीं खाऊँगा? मैं खाता हूँ; आप भले ही खिलाकर देख लें ।

हीरक के इस उत्तर से प्रसन्न होकर सेवा हँसती हुई उसके पास जा खड़ी हुई । लोकनाथ ने एक साफ़ तौलिया और एक चाँदी का चम्मच लाकर सामने रख दिया । सेवा इन कार्यों में बड़ी चतुर एवं सिद्ध-हस्त थी । बड़ी ममता से वह हीरक को भोजन कराने लगी । खाते खाते हीरक ने सोचा-रमा भी, यह कार्य इतनी भली प्रकार से नहीं कर सकती थी । जिस प्रकार सेवा कर रही है ।

सेवा ने खाना खिलाकर हीरक का मुँह पोंछ दिया । हीरक ने कृतज्ञता-सूचक दृष्टि से हँसते हुए कहा—मैंने आज आपको बड़ा कष्ट दिया । अब आप जाइये, मैं न चिल्लाऊँगा ।

सेवा ने मुस्कुरा दिया। हीरक की शिष्टता से सन्तुष्ट होकर सेवा वहाँ से चली गई।

सेवा सुमति के कमरे में पहुँची, उस समय सुमति का चेहरा बड़ा खुश था। सेवा को देखकर उसने अपना दुर्बल हाथ बढ़ाकर कहा—आओ, बेटी! एक बार मेरे पास आओ!

सेवा समझ गई; कि हीरक की शुश्रूषा करने से ही माँ का मन प्रसन्न हो गया है, अतः वह अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहती हैं। लज्जा से संकुचित होती हुई; वह सुमति के पास जा खड़ी हुई। सुमति ने उसके हाथ को चूमकर कहा—आओ बेटी! मेरी गोद में बैठ जाओ।

सेवा लजाती हुई बिछौने पर जा बैठी। सुमति ने कहा—कामिनी! ब्राह्मण को दूसरी थाली लाने को कहो!

सुमति ने और कृतज्ञता सूचक शब्द कहकर सेवा को लज्जित नहीं करना चाहा, इससे सेवा को बड़ा सन्तोष हुआ। उसने सरल भाव से कहा—अब और थाली क्यों? मैं तो इसी थाली में खा लूँगी।

सेवा की पीठ पर हाथ फेरते फेरते सुमति ने कहा—बेटी! उच्छिष्ट भोजन भी कोई खाया करता है? खाना भी ठंढा हो चुका होगा।

सेवा आनन्द से गद्‌गद्‌ हो गई। उसने कुछ उत्तर न दिया, कामिनी ने आकर कमरा साफ कर दिया।

सेवा के भोजन कर चुकने के बाद सुमति ने उससे कहा—जाओ बेटी! जाकर आराम करो।

सेवा कमरे से बाहर निकली। विश्राम को नहीं, वरन् सब बातों की व्यवस्था करने को। प्रत्येक कमरे में जाकर, वहाँ जितने

बक्स, आलमारियें; एवं दराज़ थे, सब को वह खोल खोलकर देखने लगी, कि किसमें क्या सामान है। सब को देख भाल कर उसने हीरक एवं सुमति के लिये, आवश्यक सामानों को बाहर निकाल कर; एक जगह अलग रख दिया। इसके बाद उसने लोकनाथ और कामिनी से कहा—अब भले ही तुम लोग खाने को जाओ। माँ और बाबू के पास मैं हूँ।

कामिनी और लोकनाथ चले गये। सेवा शनैः शनैः बाग़ में चली। उद्यान में पैर रखते ही सेवा सहसा खिल उठी। उसने सोचा—अब इस पुष्पोद्यान का उपभोग करने वाली मैं ही हूँ। सेवा बागीचे में घूमते २ डाल पात समेत कई अच्छे २ फूलों को तोड़ने लगी। सारे बाग़ का चक्कर लगाकर जब वह वापस आई, तो उसके पास ढेर के ढेर फूल हो गये थे। सेवा अपने कमरे में पहुँची, एवं अपने बक्स में से उसने दो सुन्दर बड़ी २ फूलदानियाँ निकालीं। फूलदानियें बड़ी मनोहर थीं, उसपर जापानी कारीगरों के हाथों से बहुत बढ़िया २ तस्वीरें बनी हुई थीं, सेवा को ये दोनों फूलदानियें एक बार पारितोषक में मिली थीं। आज तक वे उसके किसी भी काम में न आई थीं, अब वह उन्हें निकालकर उस पर बनी हुई तस्वीरों को देखने लगी। उसने सोचा–वास्तव में इन्हीं फूलदानियों में फूलों की शोभा बढ़ती है। अपने पारितोषक में प्राप्त हुई वस्तु का इतना सुंदर उपयोग देख सेवा बड़ी प्रसन्न हुई। वह उनमें जल भरकर फूलों को सजाने लगी। सब फूल उसमें रखकर वह सुमति के कमरे की ओर चली।

सुमति ने देखा—सुन्दर फूलों से भरी हुई, दो मनोहर फूलदानियों के बीच में, सेवा का फूल जैसा सुकुमार चेहरा बड़ा ही सुन्दर दिखाई देता था। सुमति ने प्रसन्नता से गद्‌गद्

होकर पुकारा—मेरी फूल रानी आओ! तुम फिर इस मरणासन्न वाटिका में नव जीवन संचार करो।

सेवा लज्जित होकर सुमति के सामने एक तिपाई पर फूल दानियाँ रखने लगी। उसे देखकर सुमति ने कहा—इन फूलों को हीरू के पास ले जाओ, वह फूलों का पागल है।

सेवा ने सुमति की बात सुनकर कहा—अच्छा, एक यहाँ रहने दो; और एक वहाँ रक्खे आती हूँ।

सुमति ने सूखी हँसी हँसते हुए एक दीर्घ निश्वास को छिपाकर कहा—मेरे कमरे में फूलों का क्या होगा? जाओ, बेटी! दोनों फूल दानियाँ हीरू को दे आओ।

सेवा ने उत्सुक होकर मुस्कुराते हुए पूछा—क्या दोनों ही वहाँ सजा आऊँ?

सुमति ने मस्तक हिलाकर कहा—हाँ दोनों ही वहाँ ले जाओ। उसके पलंग के दोनों ओर रख देना।

सेवा जब हीरक के कमरे में पहुँची, तो उसकी प्रसन्नता लज्जा में बदल गई। सेवा को देखकर हीरक ने हँसते २ उसकी अभ्यर्थना की। सेवा ने हीरक के पास पलङ्ग के दोनों ओर एक एक फूलदानी सजा दी। फूलदानियों को देखकर हीरक ने कहा—वाह! ये फूलदानियाँ तो बड़ी अच्छी हैं। ज़रा सामने लाइये। देखूँ तो सही।

सेवा ने हँसते हुए एक फूलदानी को उठाकर हीरक को अच्छी तरह से बताया। हीरक ने प्रसन्न हो कहा—ये तो वास्तव में बड़ी सुन्दर हैं। ये फूलदानियाँ आपकी हैं?

सेवा०—हाँ! मुझे एक बार पारितोषिक में मिलीं थीं।

हीरक०—आपने कैसे जाना, कि मैं फूलों को बहुत चाहता हूँ? माँ ने कहा, जान पड़ता है?

सेवा०—मैं फूलों को ला रही थी, तब माँ के पास सुना; कि आप भी फूलों से विशेष प्रेम रखते हैं। मैं स्वयमेव फूलों से बहुत प्रेम रखती हूँ; इसीसे सोचा था; कि आप भी इन्हें देखकर बड़े प्रसन्न होंगे।

हीरक की दोनों आँखें कृतज्ञता एवं आनन्द से उज्वल हो उठीं। उसने कहा—जान पड़ता है, आप फूलों को बहुत चाहती हैं? यहाँ, यह सारा बाग़ आप ही का है। आपकी जितनी इच्छा हो; उतने फूल ले सकती हैं। इस तरह की फूलदानियों ही में फूल शोभा पाते हैं। ये फूलदानियाँ आपने अपने कमरे में ही क्यों न रक्खीं?

उत्तर में सेवा ने केवल मुस्कुरा दिया। फूलदानियों को यथा स्थान रखकर उसने कहा—आपके फलाहार का समय हो चुका है। मैं आपके लिये फलाहार लिये आती हूँ।

हीरक ने कहा—आप क्यों तकलीफ़ उठाती हैं? लोकनाथ ही ले आयगा।

बाहर जाते २ मुख फिरा कर सेवा बोली—अभी आई।

सेवा चली गई। उसके जाने पर हीरक को ज्ञात हुआ, कि सेवा जबतक उसके पास रहती है, उसे तबतक बड़ा सन्तोष होता है। एवं उसके न रहने से बड़ा दुःख होता है। एक ही दिन में सेवा ने इतना प्रभाव जमा लिया है, सेवा उनकी एक आत्मीय सी होगई है। अभी तक उसकी सेवा करने के लिये वहाँ केवल दास दासी ही थे, ऐसे समय में हीरक के मन का भाव समझने के लिये एक युवती दया कर के उनके यहाँ आगई है; वह केवल आत्मीय कार्य ही नहीं; वरन् मित्र की तरह उसके विश्व से अलग रहने के दुःख को घटा रही है। इस बन्दी दशा में; सेवा, मेरे मरण दुःख को भुलादेने की चेष्टा

कर रही है, यह जानकर हीरक का मन सेवा के प्रति अत्यंत कृतज्ञ हो गया। किन्तु तौ भी उसके मरने में उसे कुछ भी सन्देह न था, वह सोचता था; कि वह रमा को छोड़कर अभीतक बचा हुआ है, केवल माँ ही के लिये ! माँ के साथ ही साथ वह भी मर जायगा। हीरक की चिन्ता में बाधा देकर सेवा वहाँ आ पहुँची। हीरक के विचारों का प्रवाह रुक गया। सेवा आगई। उसके अंग २ में यौवन की मृदु झांकी दिखाई देती थी। उसके हरएक अवयव में निपुणता मय चञ्चलता विराजमान थी। उसके दोनों हाथों में थाली गिलास और कटोरी थीं। सेवा, वह सब सामान पलंग के बराबर ही एक तिपाई पर सजाने लगी। उस सामान में फ़ीडिंग कप को भी देखकर हीरक ने पूछा—क्या, फ़ीडिंग कप मिल गया ?

फ़ीडिंग-कप में वेदाना-रस डालते हुए सेवा ने कहा—हाँ, ढूँढ़कर साफ़ धो लाई हूँ। लीजिये, ज़रा शरबत पी लीजिये।

हीरक०—किसका शरबत है ?

सेवा०—बेदाना।

हीरक०—लाइये !

सेवा ने आगे बढ़कर फ़ीडिंग-कप को उसके मुहँ से लगा दिया, हीरक बेदाने का शरबत पीने लगा।

उसे चूसते २ हीरक ने सोचा—फ़ीडिंग-कप के मिल जाने से उसे सुविधा होती है, अगर वह न मिलता, तो सेवा उसे बाहु द्वारा उठा कर पिलाती। इन दोनों में से किससे अधिक तृप्ति की संभावना थी; यह न सोचकर हीरक ने कहा—चलो भाग्य से यह मिल गया, नहीं तो आपको; मुझे बार २ उठाने में बड़ी तकलीफ़ होती।

सेवा ने लजाकर कहा—मुझसे अधिक कष्ट आपको होता। मैं स्वस्थ हूँ; और आप अस्वस्थ हैं।

हीरक चुप हो रहा—सेवा के इस उत्तर से हीरक को दुःख हुआ, या सुख, सेवा ने यह न देखपाया। इसके बाद सेवा ने हीरक का मुख पोंछते हुए कहा—आप डाक्टरी चिकित्सा क्यों नहीं कराते?

हीरक ने कुछ उत्तेजित हो कर कहा—आप कृपा करके मेरे सामने डाक्टरों का नाम न लिया करें, उन्हीं दुष्टों ने तो मेरा सर्वनाश किया है। अगर रमा को वे लोग न बचा सके, तो उन्होंने मुझे क्यों बचाया? क्या इसी तरह पड़े रखने के लिये? मैं जितनी जल्दी मर जाऊँ, उतना ही भला।

हीरक की बात समाप्त होते न होते ही कामिनी ने आकर कहा—दीदी—बीबी, माँ को मूर्छा हो गई है। जल्दी चलो।

सेवा ने कामिनी के साथ जाते हुए लोकनाथ से कहा—लोकनाथ दादा! जल्दी से डाक्टर बाबू को बुलाओ।

नवाँ परिच्छेद ।

"हमें है फिक्र अपनी ही, तुम्हें कुछ और ही धुन है"!

बहुत देर के बाद फिर सुमति को चेत हुआ। उसकी मृत्यु निकट आती जा रही थी। अशक्त होने के कारण सुमति ने इशारे से सेवा को अपने पास बुलाया। सेवा ने उनके मुख के पास झुक कर पूछा—क्यों माँ; क्या है?

क्षीण स्वर से सुमति ने कहा—हीरू के पास कौन है?

सेवा०—लोकदादा।

सुमति०—बेटी ! तुम उसीके पास रहो ।

सेवा०—मैं तो उन्हीं के पास थी, किन्तु आप को मूर्छा आते...........।

सुमति०—बेटी ! मेरी कुछ पर्वाह मत करो । तुम उसी की सेवा करो । मेरी तो मृत्यु शीघ्र ही आने वाली है । मैं हीरू को तुम्हारे सपुर्द करती हूँ । तुम उसे अच्छा कर देना ।

सेवा०—मैं प्राण पन से इसका यत्न करूँगी, वे अवश्य अच्छे हो जायँगे । उनके मुख पर तो रोगी होने का कोई चिन्ह नहीं, शारिरिक रोग की अपेक्षा उन्हे मानसिक रोग ज्यादा है ।

दीर्घ निश्वास लेकर सुमति ने कहा—बेटी ! उस रोग को दूर करने का भार तुम्हे ही लेना होगा । बहू की मृत्यु हो जाने से उसका हृदय बहुत दुःख पाता है । बेटी ! रमा का स्थान तुम ग्रहण करो । तुम्हें हीरू से विवाह कर लेना होगा । विवाह हो जाने से तुझे उसका भार लेना आवश्यक हो जायगा । बेटी ! यह देख कर मैं भी सुख से मर सकूँगी ।

सेवा चौंक उठी । सुमति के इस आकस्मिक प्रश्न का वह क्या उत्तर दे, सोच न सकी । हीरक शिक्षित, सुन्दर, एवं धनिक है; किन्तु पक्षाघात रोग ग्रस्त है । यदि हीरक का शीघ्र ही देहावसान हो जाय, तो सेवा की क्या दशा होगी ?

सेवा को चुप रहते देख कर, माँ, उसके हार्दिक भावों को समझ कर फिर बोलीं—मैं जानती हूँ, कि इस प्रश्न पर एकाएक सम्मति देना बड़ा कठिन है । किन्तु मैं अब कहाँ तक प्रतीक्षा करूँ, मेरी मृत्यु आ पहुँची है । बेटी ! बुरी से बुरी बात भी सोच देखो, जैसे हीरू अगर शीघ्र ही मर जाय, या बहुत दिनों तक शय्या पर पड़ा रहे, तौभी यह सारी सम्पति, धन दौलत, दास दासी, घरबार इत्यदि तुम्हारे ही होंगे । इस

सम्पति को लेकर ही तुम हीरू से विवाह कर लो। यही समझना, कि तुम वेतन लेकर ही अस्पताल में काम कर रही हो। मुझे मरने तक भी पूरा विश्वास हो गया है, कि तुम्हारे प्रेम पाश में बंध कर, हीरक यथा सम्भव शीघ्र ही स्वस्थ हो जायगा। मातृ हीन, असहाय हीरू पर, दया करके तुम स्वयमेव उसे प्यार करने लगोगी। अच्छा, बेटी! इस लोहे के सन्दूक को खोलो। उसमें एक छोटीसी पिटारी है, उसे निकाल लाओ।

सेवा उठी और लोहे के सन्दूक में से पिटारी बाहर निकाल लाई, और सुमति को सौंप दिया।

सुमति ने कहा—बेटी! इसे खोलो तो। उसमें एक तमगों का हार है, उसे बाहर निकालो।

सेवा ने वह हार निकाला। उस हार को दोनों हाथों में लेकर सेवाने देखा, कि सारे हार में तमग़े ही तमग़े हैं।

सुमति बोलीं—यह सब तमग़े हीरक ने अपने पौरुष द्वारा प्राप्त किये हैं; ऐसा व्यक्ति क्या ऐसे सामान्य रोग से बच न सकेगा? तुम्ही ने अभी कहा था; कि उसे शारीरिक रोग नहीं; मानसिक रोग है। बेटी! उस मानसिक रोग की चिकित्सा का भार तुम्ही ले लो—तुम्ही उसकी सहधर्मिणी बनो।

सेवा चुपचाप हार की ओर देखती रही। सेवा को चुप देख कर आनन्द बाबू, जो अब तक मौन थे, बोले—बेटी! माँ की बात स्वीकार कर लो। हीरक तुम्हारे योग्य ही है। अगर वह अयोग्य होता, तो मैं तुम्हे यहाँ क्यों लाता!

सेवा ने एक बार मुँह उठाकर आनन्द बाबू की ओर देखा, किन्तु गला रुँध गया; वह कुछ न बोल सकी! उसके मन में हाँ और ना का द्वंद युद्ध चल रहा था। वह एक बार स्वीकार

करने को उद्यत तो होती थी; और दूसरी बार यह सोच कर काँप उठती थी, कि अगर हीरक न बचा; तो उसकी क्या दशा होगी ?

सेवा को फिर भी चुप देख आनन्द बाबू ने खड़े हो कर कहा—'मौनं सम्मति लक्षणम्' मैं हीरू को भी कह आता हूँ।

सेवा उन्हें मना करने ही को थी; कि सुमति ने, जो एकटक सेवा की ओर ताक रही थी, उसकी मुखाकृति देख कर कहा—बेटी ! तुम अस्वीकार मत करो। मुझ मरती हुई को यह भिक्षा दो। तुमने मुझे "माँ" कहना स्वीकार किया है ! फिर प्यारी सेवा ! माता की अन्तिम प्रार्थना स्वीकार करो।

सेवा फिर अस्वीकार न करे। इसके भय से, एवं बहुत बोलने से थक कर सुमति को फिर मूर्छा आने लगी। उन्होंने मूर्छित होते होते कहा—बोलो बेटी ! बोलो ! तुम्हारे मुख से "हाँ" सुनकर मैं सुख से मर सकूँगी।

सेवा ने शर्म के मारे नेत्र नीचे करते हुए कहा—माँ, आप घबरावें नहीं। मुझे आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

सुमति के क्षीण एवं शुष्क चेहरे पर एक दम प्रसन्नता फूट चली। मानसिक सुख एवं आनन्द ने उसे पूर्णतया मूर्छित न होने दिया।

आनन्द बाबू ने सेवा से कहा—धन्य बेटी धन्य ! तुम इन्हें सम्हालो। मैं हीरू से मिल आता हूँ।

सेवा ने सिर हिलाकर अपनी सम्मति प्रकट की ! आनन्द बाबू को अपने पास खड़ा देखकर, हीरक ने उत्कंठित होकर पूछा—बाबा जी ! माँका क्या हाल है ? आप सत्य कहें—इन लोगों से पूछता हूँ, तो ये लोग ठीक उत्तर ही नहीं देते।

आनन्द बाबू ने हीरक के पास जाकर उसके मस्तक पर

हाथ फेरते हुए कहा—अवस्था क्रमशः ख़राब होती जारही है। Heart बहुत कमज़ोर हो गया है। कब क्या हो जाय, कहा नहीं जा सकता।

हीरक ने रोते २ कहा—माँ भी मुझे छोड़कर चली जायँगी? और मैं अकेला क्या ऐसी ही दशा में पड़ा रहूँगा?

हीरक की आँखों को पोंछते हुए आनन्द बाबू बोले—इसी विचार से तो उनकी दशा और भी बिगड़ती जा रही है। किसी एक व्यक्ति विशेष पर तुम्हारा भार सौंप देने से वह निश्चिन्त हो जावेंगी।

हीरक—आप लोग तो यहीं रहेंगे न? क्या आपने इस सम्बन्ध में माँ से कुछ नहीं कहा?

आनन्द बाबू—हम लोग तो बूढ़े हो चले, अब हमारा क्या भरोसा?

हीरक ने रोते हुए; हँसकर कहा—आप लोगों का कुछ भी भरोसा नहीं!—भरोसा जो कुछ है, मेरा ही है। न मालूम मेरे पीछे आप लोग क्यों पड़े हैं।

सान्त्वना देते हुए आनन्द बाबू बोले—तुम बलिष्ठ युवा हो, यदि चाहो तो आज ही भले चंगे हो सकते हो।

हीरक व्याकुल हो गया; उसे सन्देह हुआ, कि वास्तव में वह स्वस्थ तो नहीं हो गया। इसी आशङ्का से वह चिल्ला उठा—नहीं नहीं, मैं अच्छा नहीं हूँगा, और न होना ही चाहता हूँ।

आनन्द बाबू बोले—इसी लिये तो तुम्हारी सेवा शुश्रूषा के लिये एक दूसरे किसी व्यक्ति की आवश्यकता है। और यही कहने को तुम्हारी माँ ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है।

हीरक ने उत्सुक तथा कौतूहल भरी दृष्टि से आनन्द बाबू की ओर देखा। आनन्द बाबू कहने लगे—एक ऐसे व्यक्ति की

आवश्यकता है, जो इन तीन गुणों में निपुण हो । प्रथम वह अल्प वयसी हो, दूसरे स्त्री हो; पुरुष नहीं; तीसरे—जो तुम्हे स्नेह से अपना समझकर प्राणपण से तुम्हारी शुश्रूषा कर सके । ऐसी गुण सम्पन्ना बालिका सेवा ही है, सेवा यदि तुम्हारा भार ग्रहण करे, तो माँ निश्चिन्त होकर सुख से मर सकेंगी ।

हीरक ने उत्सुक होकर पूछा—तो क्या सेवा इसमें कुछ आपत्ति करती है ?

आनन्द बाबू बोले—नहीं, वह स्वीकार कर चुकी है ।

उत्फुल्ल होकर हीरक ने कहा—तो माँ अब और क्या चाहती हैं ? देखिये, सेवा ने एक ही दिन में हमें अपना लिया ।

आनन्द बाबू—किन्तु सेवा अविवाहिता है; कुमारी ही रहकर उसका तुम्हारे साथ रहना अच्छा नहीं ।

हीरक—तो वह विवाह क्यों नहीं कर लेती ? जिससे चाहें, करलें । उसे किसी प्रकार की कमी न होने देने का प्रबन्ध मैं कर दूँगा ।

आनन्द बाबू—तुम्हारी माँ, मेरी, और सेवा की यही इच्छा है, अब तुम सेवा से विवाह कर लो ।

अब तो क्रुद्ध होकर हीरक चिल्ला उठा—बाबा जी ! क्या आप लोग सब पागल हो गये हैं ? क्या मेरी यह अवस्था विवाह करने योग्य है ? अब हीरक को रमा की याद आई, वह विलाप करने लगा—रमा, मेरी हृदय लक्ष्मी ! उस दिन तुमने कहा था, कि कल हमारी फूल शय्या होगी ! पर रमा ! तुम्हारी यह बात बिलकुल विपरीत थी, तुम ने भूल ही से मृत्युशय्या न कहकर "फूल शय्या" कहा था । बाबा जी ! रमा को मरे अभी दस दिन भी नहीं हुए; और मेरी यह दशा है ! माँ भी "मरूँ" २ कर रही हैं । वाह ! यही तो विवाह करने का उपयुक्त समय है ।

सेवा दूध पीती बच्ची तो नहीं, कि आपके कथनानुसार कुछ भी विचार न करके किसीको अपना "पति" बनाना स्वीकार करे। अगर वह स्वीकार करेगी, तो आख़िर उसे अपने भाग्य को ही दोष देना होगा।

आनन्द बाबू ने कहा—सेवा तो तुम्हे अपना "पति" स्वीकार कर चुकी है। हिन्दू बालिकायें जन्म भर में एक ही बार पति बनाती हैं।

आवेश में आकर हीरक ने कहा—किस लोभ से? मेरे मरजाने के बाद मेरी यह सारी ज़मींदारी उसीकी होगी, इसी लोभ से न? वह तो मैं उसे न लेने दूँगा। आज तो नहीं, कल ही रमा के नाम से एक नया गर्ल्स स्कूल खुलवा दूँगा। एवं मेरी सारी सम्पत्ति, उसी गर्ल्स स्कूल के नाम लिख दूँगा।

कोमल और मृदुस्वर से आनन्द बाबू ने कहा—तुम लोग ऐसा ख़याल करोगे, यही सोचकर तो सेवा यहाँ आना भी नहीं चाहती थी। मैं ही ज़बरन् उसे यहाँ लाया हूँ। यदि तुम अपनी सारी सम्पत्ति, स्त्री शिक्षा के लिये दान कर दो, तो मैं भी बहुत प्रसन्न होऊँगा, और सेवा भी बहुत खुश होगी। स्त्री शिक्षा की आजकल कितनी आवश्यकता है, यह सेवा अच्छी तरह से जानती है।

आनन्द बाबू की इन बातों से हीरक का क्रोध कुछ शान्त हुआ। उसने तीव्र एवं विरक्त स्वर में कहा—मुझसे आप लोग इस प्रकार की हँसी न करें। मेरे लिये किसीको फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। मैं अकेला ही यहाँ पड़ा रहूँगा। मैं निःसन्देह शीघ्र ही मरूँगा। यमराज भी अगर मुझे बचाना चाहें, तो नहीं बचा सकते।

हीरक ने मारे क्रोध के अपना मुख फिरा लिंया। इतने

दिन तक तो वह निश्चेष्ट होकर पड़ा हुआ था, किन्तु आज उत्तेजित होकर उसने अपना मुख स्वयमेव ही फिरा लिया, इससे उसकी स्नायु में कार्यशक्ति का संचार हुआ देख, आनन्द बाबू बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने इस अवस्था में हीरू को अधिक उतेजित करना ठीक न समझा। प्रसन्न हो दबे पैरों वे कमरे से बाहर चले गये।

आनन्द बाबू को प्रसन्न मुख लौटते देखकर सुमति खिल उठीं। सेवा का मुख भी लज्जा से नीचा होगया। दोनों ने अनुमान किया, कि हीरक ने विवाह करना स्वीकार कर लिया है। आनन्द बाबू निकट आकर सुमति के पास खड़े हो गये। उन्हें वहाँ देखकर सुमति ने कहा—तो आज रात ही को दोनों का पाणिग्रहण करा देना चाहिये। मैं भी अब सुख से मर सकूँगी।

आनन्द बाबू अपने प्रफुल्ल मुख पर उदासी की आभा झलकाते हुए बोले—हीरक तो विवाह करना किसी भी तरह मंजूर नहीं करता। सुमति फिर उद्विग्न होगई, सेवा के मुख पर भी विषाद की गहरी छाया पड़ी। सुमति ने प्रसन्न होकर पूछा—तो आप इतने प्रसन्न होकर क्यों आये ?

आनन्द बाबू ने कहा—आज हीरक ने बिना किसीकी सहायता के अपने आपही अपना सिर फिरा लिया है, अब वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जायगा, इसमें सन्देह नहीं।

आनन्द बाबू की यह बात सुनकर सुमति कुछ प्रसन्न हुई। सेवा को भी आनन्द हुआ।

इसी समय एक अंगीठी लेकर लोकनाथ कमरे में आया, और सेवा से बोला—बाबू के भोजन का समय होगया है।

सेवा ने बहुत देर से हीरक की ख़बर न ली। सेवा

उत्सुक हुई, किन्तु हीरक ने उससे विवाह करना अस्वीकार किया है, यह सोचकर सेवा को बड़ा दुःख हुआ। कर्तव्य उसे आह्वान कर रहा था, पर लज्जा उसे मना कर रही थी। अब उसके लिये जाना और न जाना दोनों ही बड़ा कठिन हो गया। सेवा को संकुचित होते हुए देखकर सुमति ने कहा—जाओ सेवा! तुम हीरू को भोजन करा आओ।

सुमति के आदेश से बाध्य होकर संकुचित होती हुई, मंद-गति से सेवा हीरक के कमरे की ओर चली। किन्तु हीरक के कमरे में घुसना उसे बहुत ही कठिन मालूम होता था, वह चुप-चाप बरामदे में खड़ी रही। बरामदे के बराबर ही एक नीबू का पेड़ था, और पास ही कई बेले के वृक्ष लगे हुए थे। नीबू का पेड़ फूलों से लदा हुआ था। नीबू और बेले की मिली हुई सुगन्धि से पवन मत्त हो रही थी। अंधकार में इस जगह खड़ी होकर सेवा लज्जा एवं संकोच को भूल गई; और हाथ बढ़ा २ कर फूल तोड़कर आँचल भरने लगी। उस मनोहर समय में आनन्द से सेवा का हृदय खिल गया। फूल तोड़ते हुए उसे ध्यान आया, कि आज ही संध्या समय सुमति ने कहा था, कि "हीरू फूलों का पागल है।" सेवा आँचल भरकर हीरक के कमरे की ओर चली। पर दरवाज़े के पास आते ही, वह फिर ठिठक गई। उसे ध्यान हो आया; कि इस सुन्दर युवा के साथ मेरे विवाह होने का प्रस्ताव उठा था; और मेरे स्वीकार कर लेने पर भी; इस युवक ने उसे पैरों से ठुकरा दिया है। उसी समय हीरक की आवाज़ उसके कानों में पड़ी। ओह! यह बढ़िया फूलों की सुगन्धि कहाँ से आ रही है?

लोकनाथ बोला—इसी बरामदे में कई फूल खिले हुए हैं क्या। कुछ तोड़ लाऊँ?

हीरक ने कुछ उत्तर न दिया। उसी समय उसे सेवा का ध्यान हो आया, आज शाम को ही वह बहुत से फूल रख कर गई है। मैं इस बूढ़े से कहूँ, तभी मुझे फूल मिलेंगे, अन्यथा नहीं। हीरक फूलों से प्रेम करता था, एवं फूलों की सुगन्धि पाकर ही उसने आनन्द प्रकट किया था। कुछ सोचकर हीरक ने तीव्र स्वर से कहा—आज खाना नहीं बना क्या ? आज सबेरे से ही तुम्हारे सिर पर "कोई भूत" सवार है।

हीरक की ऐसी आवाज़ सुनकर सेवा ने कमरे में प्रवेश किया। अन्दर प्रवेश करते ही लैम्प का उज्वल प्रकाश सुवर्ण प्रलेप की तरह आकर सेवा के मुख पर पड़ा। हीरक ने एक दैदिप्यमान युवती को अपने कमरे में प्रवेश करते देखा। सेवा के मुख पर; हीरक के सामने जाने की लज्जा, भोजन में देर हो जाने से व्यग्रता, तथा हीरक के मन को प्रसन्न करने वाले फूलों के ले जाने से प्रसन्नता के भाव झलक रहे थे। कहीं हीरक विवाह के सम्बन्ध में कोई प्रश्न न करदें, इस बात ने; सेवा के चेहरे को और भी लावण्यमय और शंकित बना दिया था।

हीरक ने जिसे अभी कुछ देर पहिले "भूत" कहकर सम्बोधित किया था, वह उसी समय एक देवबाला का रूप धारण कर दृष्टि को चकित करती हुई; कमरे में आई। हीरक ने कई स्त्रियाँ देखी थीं, किन्तु इतना अपरिमित लावण्य एवं आभा उसने किसीमें भी नहीं पाई थी। उसे जान पड़ा, कि यह केवल रमणी ही नहीं, रमणीय भी है। स्तब्ध एवं अवाक् हो अपने मन ही मन उसके सौन्दर्य्य की प्रशंसा करने लगा।

हीरक के चेहरे के भावों को समझते ही सेवा का संकोच एवं भय दूर हो गया। उसके मुख एक अपूर्व प्रतिभा दिखाई देने लगी। उसने मुस्कुरा कर कहा—आप के लिये कुछ फूल

लाने चली गई थी, इसीसे देर हो गई । लोकनाथ दादा ! महाराज को भोजन लाने की ख़बर दो ।

वृद्ध रसोइया आज्ञा पाकर चला गया । सेवा हीरक के बिछौने के पास फूलों को सजाने लगी । हीरक, सेवा के रमणीय चेहरे की ओर एक टक देखता रहा; इतनी सुन्दर एवं चतुर युवती को इस प्रकार मैंने पददलित किया है, यह सोच कर उसे बड़ी लज्जा हुई । न जाने सेवा को इससे कितना दुःख हुआ होगा । परन्तु तब भी अपने दुःख को प्रगट न करके प्रसन्न हो कर वह मेरी शुश्रूषा करने आई है ।

हीरक का मन सेवा के निकट कृतज्ञ एवं क्षमा प्रार्थी हुआ । इतने में रसोइया पाचक भोजन ले आया । सेवा ने हीरक को भोजन करा कर उसका मुख पोंछ दिया । लोकनाथ उच्छिष्ट बर्तन उठा कर चला गया । अब तक दोनों ही चुप थे । लज्जा को हटा कर सेवा ने कहा—आप तो अब सोवेंगे न ?

हीरक ने कहा—मुझे तो नींद ही नहीं आती । सारी रात पड़े रहने से सबेरे कुछ २ आँख लग जाती है ।

सेवा बोली—आप को अभी सुलाये देती हूँ देखिये ।

हीरक ने हँस कर कहा—मुझे कभी भी नींद नहीं आती, आप क्यों वृथा परिश्रम उठाती हैं !

सेवा—मैं "मासेज़ा" कर जानती हूँ । इससे "नर्वस्" सुदृढ़ होती हैं, एवं उससे शीघ्र ही निद्रा आ जाती है, मैंने कई इन्ज़ेमनिया पेशेन्ट्स् को इसी प्रकार सुलाया है ।

प्रसन्न हो कर हीरक ने कहा—आप मेरी इतनी सेवा कर रही हैं, मेरी क्या ताक़त है, कि आपके सम्मुख कृतज्ञता प्रकट करूँ । यदि कभी भूलकर भी मैंने आप से कोई असद् व्यवहार

किया हो, तो मेरी धृष्टता क्षमा करें। कभी यह ख़याल न करें कि मैंने आप की अपमान किया है।

सेवा ने जल्दी २ हीरक के शरीर पर हाथ फिरा के उसके अंग की पेशी स्नायु को संचालन करते २ कहा—मैं जानती हूँ कि आप एक बहुत भद्र व्यक्ति हैं। आप से इस तरह की बातें शोभा नहीं पातीं। मैं आप को दोष नहीं दे सकती, आप डरें नहीं। अपने मन में इस प्रकार के विचार निकाल दीजिये।

सेवा के हस्त-संचालन से हीरक के शरीर में जो एक प्रकार की कंप कंपाहट उठी थी, उसके कौतुक एवं आनन्द में मग्न होकर हीरक की आँखें कुछ कुछ मिलने लगीं। कुछ ही समय में वह सो गया।

हीरक को सो गया देख कर; अपने कार्य में सफल हुआ समझ, वह हीरक को सोता हुआ छोड़ कर सुमति के पास चली गई। उसके आनन्दोज्ज्वल मुख को देख कर सुमति ने पूछा—'बहू'! हीरू क्या कर रहा है?

सुमति ने सेवा को 'बहू' कहा—इस शब्द को सुन कर सेवा का मुख लज्जित हो गया, मानो नाना प्रकार के रंगों से रंगे हुए फ़ानूस के अन्दर से दीपक ज्योति जगमगा रही हो। अपनी सफलता की प्रसन्नता को लज्जा से छिपा करके कोमल स्वर से उसने कहा—उनको सावधानी से सुला आई हूँ।

सुमति बड़ी प्रसन्न हुई, एक बार मुश्किल से अपने दुर्बल हाथों को उसके गुलाबी गालों पर फिराते हुए उसके कोमल हाथों को चूमकर सुमति ने कहा—बेटी! सारे दिन की थकी हो, खा पीकर जल्दी से सो जाना।

सेवा दिन भर के परिश्रम से बिलकुल थक गई थी। वह भोजन करके अपने कमरे में सो रही।

दसवाँ परिच्छेद।

चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय !
दो पाटन के बीच में साबित बचा न कोय !!

रात के बारह बज चुके; कामिनी ने आकर रोते २ पुकारा बहू दीदी ! बहू दीदी !! जल्दी उठो, माँ फिर मूर्छित हो गई थीं; अभी आपको पुकार रही हैं।

सेवा चौंककर उठ बैठी। और नींद की खुमारी के कारण दोनों हाथों से आँखें मलते हुए कामिनी के साथ चल पड़ी। सुमति ने सेवा को "बहू" कहा था, और अब कामिनी ने भी "बहू दीदी" ही कहा, इससे सेवा जान गई, कि हीरक के अस्वीकार करने पर भी सुमति ने उसे "बहू" कह कर स्वीकार करलिया है। सुमति के पास पहुँचते ही उसने सेवा से कहा–'बहू' तुम मेरे कुल की गृहलक्ष्मी हो ! मेरे जीवन दीप के बुझने में अब अधिक विलम्ब नहीं है। पुरोहित भी आगये हैं, मैं तुम दोनों का ग्रंथि–बंधन देखकर मरना चाहती हूँ।

घोर निद्रामें आये हुए स्वप्न के समान, सेवा ने यह सब सुना। इतने में अकस्मात् पास के कमरे से हीरक की चिल्लाहट सुन पड़ी—ना ! ना !! ना !!! आपको मैंने कितनी बार कहा, कि आप मुझसे दिल्लगी न करें......।

सुमति ने क्षीण स्वर से कहा—कामिनी ! लोकनाथ को बुलाला, चार आदमी पकड़ कर मुझे हीरू के पास ले चलो।

भयभीत होकर डाक्टर ने कहा—इस अवस्था में हिलने डुलने से सर्वनाश होने की संभावना है।

सुमति ने ईषत् हास्य करके कहा—सर्वनाश ! सर्वनाश का मतलब मृत्यु ही है न ? डाक्टर बाबू ? मृत्यु तो पल पल में

मेरे निकट आती जारही है । मैं उस कमरे में जाऊँगी । अवश्य जाऊँगी । मरते समय एक बार मेरे हीरू को देखकर ही मरूँगी ।

सुमति बड़े कष्ट से सांस लेने लगी । डाक्टर ने मना न किया । लोकनाथ और चार पाँच नौकरों ने मिलकर सुमति को बिछौने के साथ उठाकर एक हलके पलंग पर लिटा दिया, और उस पलंग को लेकर हीरक के पास चले ।

सुमति हीरक के कमरे में पहुँच गई । माँ की यह दशा देखकर कातर एवं आकुल होकर हीरक ने पुकारा—माँ !

हीरक के "मा" शब्द को सुनकर स्नेहार्द्र स्वर से सुमति ने उत्तर दिया—हीरू !

सुमति का पलंग, हीरक के पलंग से मिलाकर रख दिया गया । हीरक, अपनी माँ की यह दशा देख; फूट २ कर रोने लगा । इस रोने में, माता तथा पुत्र के शय्यागत होने के बाद प्रथम साक्षात् का आनन्द; माँ की आसन्न मृत्यु की आशंका; पुत्र बधू के शोक से शोकातुर माँ के पास पत्नी वियोग से दुःखित पुत्र का शोक, माता के असङ्गत आदेश की शिकायत, एवं आनन्द बाबू के आग्रह पर भी अपनी इच्छा के विरुद्ध एक अपरिचिता के साथ विवाह करने की विरक्ति, मिली हुई थी । सुमति अपने हाथ को उठाने की चेष्टा करने पर भी, उठा न सकती थी । सेवा ने उसका हाथ उठाकर हीरक के मस्तक पर रख दिया । सुमति ने क्षीण स्वर से कहा—बेटा ! हीरू !!

हीरक रोता ही रहा । आनन्द बाबू, हीरक से विवाह कर लेने का अनुरोध करने को पहिले ही आगये थे । उन्हों ने हीरक से झुककर कहा—हीरू, तुम्हारी माँ तुम्हें पुकार रही है, तुम सुनते नहीं ।

रोते २ हीरक ने कहा—हाँ ।

सुमति—बेटी ! मेरे प्यारे हीरू !! तुमने आज तक कभी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की, मेरा यह अंतिम अनुरोध है, कि तुम सेवा से विवाह कर लो । मैं यह देखकर सुख से मर सकूँगी । बेटा ! आज रात्रि के व्यतीत होते न होते मैं इस संसार में न रहूँगी ।

हीरक बालकों के समान फूट २ कर रोने लगा । वास्तव में उसने कभी भी माँ की आज्ञा न टाली थी । अतः अब उसे माँका यह अन्तिम अनुरोध, अस्वीकार करने में बड़ी कठिनाई हुई । हीरक को निरुत्तर देखकर सुमति ने आनन्द बाबू से कहा—पुरोहित जी को बुलाकर आप कन्या-दान का कार्य शुरू करें । अधिक विलम्ब करने से मुझे घबराहट हो रही है ।

पुरोहित जी नीचे बैठे २ राह देख रहे थे । उन्होंने आकर अग्नि जलादी, और मन्त्र पढ़ने लगे । पुरोहित जी के कहने से आनन्द बाबू ने सेवा और हीरक का हाथ मिलाते हुए इस मंत्र का उच्चारण किया—"सवस्त्राच्छादिताऽलंकृता प्रजापति देवतानां, अर्चितां एनां कन्यां तुभ्यं अहं संप्रददामि" उस समय आनन्द के मारे सुमति की छाती में एक प्रकार की धकधकाहट होने लगी । उसके मुखपर गहरी हास्य-रेखा फूट उठी, और साथ ही साथ उसकी जीवन-यात्रा भी समाप्त हो गई ।

यह देख कर डाक्टर घबरा कर नाड़ी की परीक्षा करने लगा; आनन्द बाबू मंत्र पढ़ना छोड़ कर सुमति की ओर दौड़े । हीरक व्याकुल हो कर माँ ! माँ ! माँ ! कह कर चिल्लाने लगा । हीरक के अशक्त हाथ से हाथ मिलाये हुए, सेवा किंकर्तव्य-विमूढ़ हो कर खड़ी रही । उसने सोचा, यह कैसी भीषण घटना है ! यह कैसा विवाह है ! मालूम होता है; अग्नि ही नहीं,

प्रत्यक्ष धर्मराज भी इस विवाह के साक्षी हैं। सेवा आज की यह दुर्घटना सारे जन्म कभी न भूलेगी।

पुरोहित जी का मन्त्रोच्चारण बंद हो गया; आनन्द बाबू भी कन्यादान करते २ मलिन मुख से सुमति की ओर दौड़े। हीरक चीखें मार मार कर चिल्लाने लगा।

सेवा की आँखों से भी अविरल अश्रुधारा बह चली। वह हीरक के हाथ से अपना हाथ छुड़ा कर आँसू पोंछने लगी!

ग्यारहवाँ परिच्छेद ।

फ़लक ने दे दिया है रंज मुझको एक आलम का !
रुलादेता है दुश्मन को भी सदमा, मेरे मातम का !!

हीरक और सेवा का विवाह-कार्य्य अर्द्ध समाप्त ही रह गया। इस समय हीरक का सारा भार सेवा और आनन्द बाबू पर ही था।

माता के शोक में हीरक, बहुत ही व्याकुल हो फूट फूट कर रो रहा था। इधर थोड़े समय में ही माँ के प्रति सेवा के हृदय में जो प्रेम हो गया था; सेवा अपने को उससे एकदम बंचित देख; दुःख एवं शोक से कातर हो उठी। उसे अपने विवाह के अनुष्ठान की खबर तक न रही आनन्द बाबू इस चिन्ता में थे; कि विवाह का अनुष्ठान संपूर्ण हो जाता; तो उत्तम होता; लेकिन, हीरक और सेवा की ऐसी हालत देख कर वे मुँह से कुछ भी कहने का साहस न कर सकते थे।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब सुमति की लाश को अग्नि क्रिया के लिये लेजाने को लोग एकत्रित हुए; तब प्रश्न उठा; कि सुमति का और्ध्वदैहिक कार्य कौन करेगा? आँसुओं से परि-

पूर्ण आँखों को टम टमाते हुए हीरक ने कहा—सेवा यहीं है क्या? आनन्द बाबू बोले—हाँ यही है।

सेवा हीरक के सिरहाने बैठी २ चुपचाप रो रही थी; उसने जल्दी से आँसू पोंछ कर हीरक के सामने आकर कहा—क्यों! क्या है?

हीरक ने देखा; कि सेवा के दोनों नेत्र अश्रुपूर्ण थे; उसके मुख पर शोक की एक गम्भीर छाया दिखाई देती थी; उसका स्वर रुँधा हुआ था। अपनी माता के लिये एक नवागता रमणी को इतनी कातर व शोकाभिभूत देख कर हीरक को बड़ा विस्मय हुआ। उसने कातर स्वर से कहा—मुझ में तो हिलने डुलने की ताक़त नहीं है। क्या? तुम्हीं मेरी ओर से माका बिदासत्कार कर आओगी?

हीरक के इस प्रश्न से सेवा बड़ी प्रसन्न हुई। हीरक ने उसे अपनी पत्नी मान लिया है; इसमें उसे कुछ भी सन्देह नहीं रहा। क्योंकि पहिले तो हीरक ने उसे 'तुम' कहा; और साथ ही साथ उसे अपनी ओर से माता का अन्तिम सत्कार करने को कहा। वह बोली—कर आऊँगी।

हीरक कुछ न बोला, आनन्द बाबू और सेवा चले गये।

सास की दाह क्रिया करके जब सेवा वापस लौटी; तो एक बज चुका था। सेवा ने लौट कर सब से पहले स्नान किया, फिर वह कपड़े पहिन कर हीरक से मिलने गई। उसे देख कर हीरक ने कहा—सेवा? माँकी दाहक्रिया पूर्ण हो गई न?

सेवा के नेत्र आँसुओं से सजल हो आये। सेवा को देख कर लोकनाथ भी आँसू पोंछता हुआ वहाँ आया। उसे देखकर सेवा ने पूछा—लोकनाथदादा! क्या? भोजन बन गया? इन्हें खिला दिया या नहीं?

लोकनाथ—हो तो कभी का गया—पर इन्होंने कहा, कि आप के आने पर खाऊँगा ।

सेवा ने आतुर होकर कहा—बहुत देर होगई, जाओ खाना ले आओ ।

हीरक ने स्नेह भरे स्वर से कहा—मेरे लिये मत डरो । पहिले तुम खा लो, पीछे मैं भी खा लूँगा । देखो, तुम आज सारे दिन धूप में फिरी हो । अगर तुम भी बीमार हो जाओगी, तब तो हमें बड़ी तक़लीफ़ होगी । अब माँ भी नहीं हैं, अकेला मैं ही बचा हूँ, सो भी इस बुरी हालत में । इतना कहते २ हीरक की आँखें डबडबा आईं; हीरक के स्नेह भरे शब्दों से सेवा बड़ी प्रसन्न हुई ।

रुमाल से हीरक की आँखें पोंछते हुए सेवा ने कहा—पहिले आप कुछ खा पी लें, पीछे मैं खाऊँगी । लोकनाथ-जाओ, भोजन मँगाओ ।

लोकनाथ चला गया । हीरक कुछ ठहर कर बोला—अब ब्राह्मण के हाथ का भोजन अच्छा नहीं लगता, ख़ैर, और कुछ दिन इसी प्रकार निकल जायँगे ।

सेवा ने उत्तर दिया—तो मैं बनाया करूँगी ?

आतुर होकर हीरक ने कहा—नहीं २, तुम्हें इतना दुःख पाने की आवश्यकता नहीं ।

सेवा ने कहा—मुझे भी दूसरे के हाथ का भोजन अच्छा नहीं लगता, मैं ही भोजन बना लाती हूँ ।

बचपन से क्रिश्चियन मिशनरी के पास और क्रिश्चियन स्कूल में मास्टरनी रहकर, सेवा हिन्दू आचार विचारों पर ध्यान न देती थी, किन्तु अब हीरक को सन्तुष्ट रखने के लिये

वह उनका पालन बड़ी चतुराई से करती थी। हीरक कुछ न बोला—लोकनाथ कुछ मिठाई ले आया।

सेवा हीरक को जलपान कराके भोजन बनाने चली गई। भोजन तयार करके उसे थाली में सजा, जिस समय सेवा हीरक के पास आई, उस समय प्रायः सन्ध्या हो चुकी थी। सारे दिन अनाहार रहने के कारण सेवा का मुख पहिले ही सूख गया था; और चूल्हे की ताप लगने के कारण उसका मुख एक मुरझाये हुए फूल के समान, श्री-हीन होगया था। सेवाने शीघ्रता से हीरक के पास पहुँच कर कहा—आज आपको बहुत देर होगई; बिलकुल ही सन्ध्या होगई।

हीरक सेवा के व्यवहारों पर मुग्ध हो रहा था। रमा से तो केवल प्रणयिनी पत्नी का प्रेम पाकर ही हीरक प्रसन्न एवं तृप्त होता था किन्तु सेवा में उससे कई गुण विशेष दृष्टिगोचर हुए। सेवा, मित्र की तरह आश्वासन देने में पटु, सेवा करने में दासी से भी अधिक चतुर, एवं पत्नी की तरह प्रेम परिपूर्ण है। उसे इन्दुमति के लिये अज की धारणा याद हो आई।

"गृहिणी सचिवः सखी मिथः
प्रिय शिक्षा ललिते कला विधौ।"

हीरक जानता था कि अब वह और अधिक दिन नहीं बचेगा। इस हेतु वह सेवा से पत्नी-पति का सम्बन्ध नहीं करना चाहता था। लेटे लेटे हीरक के मन में कई तरह के विचार उठने लगे। क्या सोच कर सेवा ने मेरे साथ विवाह करना निश्चय किया है? क्या समझ कर वह इतना दुःख सहने के लिये कटिबद्ध हुई है? क्या मेरी भौतिक सम्पत्ति के लोभ वश? लेकिन सम्पत्ति क्या, सेवा के वैधव्य दुःख को मिटा सकेगी? दारिद्र्य पीड़ित, सांसारिक अनुभवों से हीन सेवा ने, केवल

सम्पत्ति के लोभ में आकर अपने आपको इतने सस्ते मूल्य में बेच दिया है; इसमें कुछ सन्देह नहीं। किन्तु मेरी मृत्यु के पश्चात् जब वह अपनी हालत पर विचार करेगी; तब उसे मालूम होगा; कि वह ठगाई जा चुकी है। उस समय वह इस बात के लिये अपने आप को ही नहीं कोसेगी; किन्तु साथ ही साथ अन्य कई लोगों को भी दोष का भागी बनावेगी। यह सोचते हुए सेवा के प्रति हीरक को बड़ी करुणा आई। सेवा उसे भोजन कराने लगी; वह चुपचाप खाता रहा। कुछ देर बाद हीरक ने सेवा से पूछा तुमने कुछ जलपान तो कर लिया है न?

सेवा-भोजन बनाने के पहिले ही मैं किस तरह खा लेती? भोजन बनाने के पहिले भी क्या कोई खाया करता है?

हीरक सेवा से जितनी अधिक बातें करने लगा, उसे बड़ा आश्चर्य होने लगा। उसने आश्चर्यान्वित होकर पूछा—तुम रही तो कोटा में, और वहाँ भी एक मेम के पास; तुम्हें हिन्दू आचार विचार का ज्ञान कहाँ से प्राप्त हुआ?

मुस्कुराते हुए सेवा ने कहा—मेम के पास रहने के कारण ही क्या मैं अपनी मातृभूमि भारतवर्ष एवं मेरी हिन्दू जाति के आचार विचार एवं व्यवहारों को भूल सकती हूँ? यदि ऐसा हो, तो मुझे हिन्दू कहलाने में बड़ी लज्जा मालूम होती? मैं सदा हिन्दू आचार विचारों से प्रेम रखती थी। हाँ, यहाँ आने से पहिले मैंने उन्हे व्यवहार में बहुत कम लिया था, क्योंकि मुझे इस तरह का अवसर ही न मिला था।

हीरक ने कहा, संध्या होगई। तुम और देरी न करो, जाकर खाना खाओ। मुझे तो तुम खिला चुकी। तुम खाती हो, या नहीं। यह देखने की मुझमें सामर्थ्य नहीं, अतः मैं मज़बूर हूँ। खैर, तुम्हारी, तुम जानो।

हीरक के मुँह से सेवा के लिये जो ममतामय स्वर निकला; वह सेवा को बड़ा प्रिय ज्ञात हुआ। सेवा ने कहा—तो आप चलें न? अगर आप उठना चाहें, तो स्वयं उठ सकते हैं। आप अपनी इच्छा ही से बीमार हैं? जान बूझकर पड़े हुए हैं।

हीरक ने विरक्त एवं कुछ दुखित होकर कहा—सेवा! भीष्म के समान अगर मुझ में भी इच्छा-मृत्यु की शक्ति होती, तो मैं एक क्षण के लिये भी यहाँ न पड़ा रहता; और न तुम्हें ही कष्ट देता।

इस बात को सुनी अनसुनी सी करके सेवा कमरे से चली गई। हीरक ने देख लिया; कि सेवा कुछ अप्रसन्न सी हो गई थी। सेवा हीरक को स्वस्थ करना चाहती है, वह उसके मुख से ऐसा कुवाक्य कभी नहीं सुनना चाहती, यह जानकर हीरक मन ही मन सेवा पर सन्तुष्ट हुआ; किन्तु हीरक के मन में तब भी यही विश्वास था; कि किसी हालत में भी वह अब नीरोग नहीं हो सकेगा; और न हीरक नीरोग होना ही चाहता था। अगर सेवा न आती, तो हीरक की स्मृति में कोई भी दो बूंद आँसू न गिराता। अब एक व्यक्ति तो ऐसा है; जो हीरक की याद में अहर्निशि आँसू बहायगा। और वह है, सेवा। मनुष्य मृत्यु के अन्तिम क्षण तक भी अपने वंश को लुप्त करके नहीं मरना चाहता, उसे अपने वंश रक्षा का ख़याल अवश्य आता ही है। उत्तराधिकारी न होने से मनुष्य पोष्य पुत्र रखते हैं; अथवा अपनी सम्पत्ति को किसी ऐसे काम के लिये दान कर जाते हैं, कि जिससे उसकी स्मृति बनी रहे। हीरक ने भी सोचा, कि इस समय मेरी मृत्यु भी सहज एवं सुखकर होगी; यह सोच वह मन ही मन बड़ा प्रसन्न हुआ।

बारहवाँ परिच्छेद ।

जारी होता जल नयन से अंग में स्वेद आता ।
है क्या तेरी यह जग वशीकारणी शक्ति भारी ॥

आज रमा की मृत्यु हुए दस दिन हो गये। सेवा भोर होते ही उठ बैठी, और उद्यान से जाकर रंग बिरंगे फूल तोड़ लाई तथा स्नान करके धीरे २ हीरक के कमरे में पहुँची; तो उसने देखा; कि हीरक तब तक सो ही रहा था। हीरक के कमरे में दीवार पर रमा का एक फ़ोटो लगा हुआ था। सेवा ने उसे लाकर हीरक के पलंग के पास कुर्सी पर रख दिया, और फूलों की डाली लाकर, उस फ़ोटो को तरह २ के रंगीन फूलों से सजाने लगी।

कई प्रकार के फूलों की सुगंधि से हीरक की आँखें खुल गईं। वह आँखें मलते हुए आकाश की ओर ताकने लगा, उसने देखा; कि शरद् की ऊषा के अपूर्व लावण्य से आकाश ने एक अनुपम श्री धारण कर रक्खी है; और शीतल मंद वायु बेला, चमेली, जूही, गुलाब, केतकी की सुगंधि से मिल कर उस कमरे को सुगन्धित कर रही है। हीरक खुले हुए जंगले की तरफ देखता रहा, किन्तु यह न जान सका कि वह सुगंधि कहाँ से आ रही थी ?

जब हीरक ने दूसरी ओर आँखें फिराईं; तो उसकी निगाह सब से पहिले सेवा पर पड़ी। उसने देखा, कि पास ही कुर्सी पर रमा का फ़ोटो रक्खा हुआ है; और सेवा उसके सामने घुटने टेक कर बैठी हुई फोटो को फूलों से सजा रही है। हीरक का हृदय रमा के लिये शोक से, और सेवा के इस आचरण से प्रसन्नता से द्रवित हो गया। वह कातर एवं मुग्ध होकर रमा के चित्र को एवं सेवा की पवित्र मूर्ति को

एकटक देखता रहा। देखते २ दुःख एवं आनन्द से परिपूर्ण हो, हीरक की आँखों से आँसू टपकने लगे। उसने सेवा को अपने जागने की सूचना न दी, सेवा भी फोटो सजाने में इतनी मग्न हो रही थी, कि उसे भी हीरक के जागने का पता न लगा। रमा के फोटो को अच्छी तरह से विभूषित करके वह उठी, तो देखा, कि हीरक जाग चुका है। हीरक स्नेह पूर्ण दृष्टि से डबडबाये हुए नेत्रों से फोटो और सेवा को देख रहा था।

सेवा कुछ कहना ही चाहती थी, लेकिन हीरक को अश्रु पूर्ण देख खड़ी रही, कुछ ठहर कर हीरक ने पूछा—यह क्या, सेवा ?

सेवा ने दुखित हृदय से कहा—आज दीदी के श्राद्ध का दिन है। पुरोहित ने कहा है, कि जब तक माँ को मरे दस दिन न हो जावेंगे, तब तक श्राद्ध नहीं हो सकता, किन्तु आज दीदी के प्रति कुछ श्रद्धा न दिखाना मुझे अच्छा न लगा।

हीरक शोकाकुल होकर रोने लगा, उसने आज सेवा के उदारचित्त का महत्व पाया। रमा उसकी मृत पत्नी है, रमा हीरक को बहुत प्यारी थी, इसीलिये वह सेवा से विवाह न करना चाहता था। जब तक वह रमा को न भूलेगा, तब तक सेवा के लिये उसके हृदय में कोई स्थान नहीं है, यह जान कर भी सेवा अपने हाथों से रमा के फोटो को सजा कर उसके प्रति अपनी अटल श्रद्धा प्रकट कर रही है।

हीरक ने मुग्ध स्वर से कहा—सेवा ! रमा जब जीवित थीं; यदि तुम उस समय आतीं तो तीनों ही सुखी होते।

सेवा ने उत्तर दिया—उनके जीवित रहने पर तो मेरे आने की आवश्यकता ही क्या थी ? उस समय आप से परिचित होने की कोई सम्भावना भी न थी।

सेवा का यह उत्तर हीरक को बहुत कुछ बुरा लगा। रमा के साथ परिचय होने की इच्छा सेवा को क्यों न हुई? सेवा रमा से घृणा करती है? क्या वह अपने आगे रमा को कुछ भी नहीं समझती? क्या रमा के प्रति उसकी यह भक्ति बनावटी ही है? हीरक ने मन ही मन सेवा से क्रुद्ध होकर अपना मुँह फेर लिया। सेवा ने यह सब देखा, किन्तु इसका कारण उसने और ही कुछ समझा। उसने सोचा, कि हीरक अपनी माता एवं स्त्री को याद करके उदास हो गया है। वह भोजन का इन्तज़ाम करने के लिये कमरे से बाहर चली गई।

सेवा की इस बात से हीरक को बड़ा दुःख हुआ, वह कई दिन तक इस बात को न भूल सका। वह हमेशा गम्भीर एवं चिंतित रहने लगा, सेवा उसे भोजन कराती थी, अख़बार वगैरह पढ़कर सुनाती थी, रात्रि को जब तक हीरक सो न जाता, तब तक वह अच्छे २ सामयिक विषयों पर चर्चा किया करती थी। हीरक प्रायः उदास रहा करता था; वह खाता था, तो चुपचाप; सेवा का अख़बार तथा किसी पुस्तक का पढ़ना सुनता था, तो चुपचाप। कुछ पढ़कर जब सेवा पूछती, क्या, और पढ़ूँ? तो हीरक उत्तर देता, बस करो—जी नहीं लगता। निद्रा आजाने के पहिले ही वह सो जाने का बहाना करता, और जब सेवा उसे सोया हुआ जान कर चली जाती, तो वह सारी रात पड़ा २ ठंढी साँसें लिया करता—रोया करता। सेवा हीरक की यह दशा ताड़ चुकी थी, किन्तु उसका कारण न जान सकी। वह सोचती थी, माँ और स्त्री का दुःख ही हीरक की दशा का कारण है, लेकिन हाँ, जब सेवा डाल पात समेत फूलों को अपने गले में सजा कर कमरे में जाती; तब हीरक प्रसन्न हो उठता था, पर वह प्रसन्नता काले बादलों में

बिजली की तरह शीघ्र ही लोप हो जाती थी।

इसी तरह करते करते सुमति के श्राद्ध का दिन आ गया, सेवा प्रातःकाल ही उठी, और पुरोहित के कहे हुए सामान को इकट्ठा करने लगी। बार २ वह अपना काम छोड़ कर, हीरक को देख आती थी। हीरक तब तक सो ही रहा था। एक बार उसने देखा, कि हीरक जाग चुका है, सेवा हीरक के पास जाकर बोली—आज माँ के श्राद्ध का दिन है। मैंने मैनेजर बाबू को कह कर पुरोहित के कहे अनुसार सामान मंगा लिया है। श्राद्ध इसी कमरे में कराऊँगी?

हीरक बोला—हाँ, यहीं हो; तो अच्छा है, मैं भी देख लूँगा।

दासियों और सेवा ने मिल कर कमरे को साफ़ कर दिया एवं श्राद्ध की सामग्री से उस कमरे को सजा दिया। हीरक को वह सारा कार्य थोड़ी ही देर में होते देख, बड़ा अचरज हुआ। सेवा ने श्राद्ध की सब सामग्री मँगा ली। चाँदी के बरतन, खाट, बिछौना, जूता, छाता, कपड़े इत्यादि सब वहाँ सजा दिये। सेवा की कार्यकुशलता को देख कर हीरक हमेशा विस्मित हो जाया करता था। उसने अपने अश्रुपूर्ण नेत्रों से सेवा का अभिनन्दन करते हुए कहा—तुम तो इतनी गुणवती हो, कि मुझे स्वप्न में भी तुमसे इतनी आशा न थी। अगर माँ कुछ दिन और बची रहतीं, तो तुम्हारी चतुरता देख कर प्रसन्न होतीं।

सेवा की आँखें डबडबा आईं। मैंने माँ पाकर भी उसे खो दिया। मुझे माँ की सेवा करने का अवसर भी न मिला। मैंने उनकी केवल एक दिन ही सेवा कर पाई, इसीलिये मैं अपने को धन्य समझती हूँ। थोड़े ही समय में मैंने उनसे जो पाया, वह अवर्णनीय है।

हीरक अपनी माँ को बहुत चाहता था। सेवा से माँ की प्रशंसा सुनकर उसे बड़ा हर्ष हुआ। हीरक ने आनन्दित होकर कहा—मुझमें तो शक्ति नहीं, कि माँ का श्राद्ध कर सकूँ—तुम्ही माँ का श्राद्ध करो, माँ स्वर्ग से यह देखकर बड़ी प्रसन्न होंगी।

हीरक की यह बात सुनकर सेवा प्रसन्न हो उठी। हीरक उससे अब अपने आत्मीय सा बर्ताव करता है, यह जानकर सेवा बड़ी प्रसन्न हुई।

हीरक के सामने सुमति का श्राद्ध सेवा ने विधिपूर्वक किया। इसके अनन्तर वह निमंत्रित अतिथियों के भोजन का प्रबन्ध करने लगी। उन्हें भोजन कराते २ रात्रि हो गई; तब भी सेवा को भोजन करने का अवसर न मिला। इस घबराहट में भी वह बार २ हीरक की संभाल करती रहती थी। उस दिन सेवा की कार्य कुशलता देखते ही बनती थी।

मैनेजर ने सेवा की इस अनुपम व्यवस्था को देख कर आनन्द बाबू से कहा—ओहो! हमारी बहूरानी तो एक अपूर्व गुणवती महिला हैं!

सेवा की प्रशंसा से प्रसन्न हो कर आनन्द बाबू ने उत्तर दिया—शिक्षा मनुष्य को चतुर बना देती है; शिक्षा के साथ ही साथ यदि स्वभाव भी अच्छा हो तो क्या कहना?

सेवा में तो शिक्षा एवं गुण दोनों ही विद्यमान हैं।

सेवा रात्रि में हीरक को भोजन कराने आई; तब हीरक ने उससे पूछा—दिन भर से बराबर फिर रही हो, अभी तक तुमने भी कुछ खाया या नहीं?

सेवा ने लज्जित हो कर कहा—मैं भी खा लूँगी। पहिले सब लोगों को चले जाने दीजिये।

हीरक ने चकित हो कर पूछा—अभी तक क्या तुमने कुछ भी नहीं खाया ? इतने लोगों को निमन्त्रण किसने दिया ?

सेवा ने संकुचित हो कर कहा—मैंने ! माँ के श्राद्ध में कुछ भी समारोह न हो; यह मुझे ठीक न लगा। वे तो समस्त प्रजा की माँ थीं।

हीरक; सेवा से उत्तरोत्तर सन्तुष्ट होकर विशेष स्नेह करने लगा था। उसने पूछा—क्या अब भी कुछ लोग बाकी हैं ?

सेवा—हाँ ! थोड़े से और हैं। दु.र्भित्त पीड़ित अनाथ लोग जो दूसरे गावों से आये हुए हैं, वे अब खायेंगे, बाकी स्थानीय मण्डली सब बिदा हो चुकी है।

हीरक—उनके भोजन का प्रबन्ध मैनेजर बाबू करवा देंगे, नहीं तो, उन्हें नक़द दत्तिणा देकर बिदा कर दो। तुम्हारा तो आज अच्छा खासा उपवास हो गया।

घबरा कर सेवा ने कहा—ऊँह ! वे ग़रीब लोग हैं, उन्हीं बेचारों की तो अच्छी ख़ातिरदारी करनी चाहिये। मैं अच्छी तरह जानती हूँ; कि दुःख क्या चीज़ है।

सेवा के इस उत्तर से हीरक चुप हो गया, वह और मना न कर सका। बोला, अच्छा तो और देरी मत करो, तुम जाओ उन्हें खिला कर खुद भी खा लेना; तब मेरे पास आना, पीछे मैं भी खालूँगा; पहिले नहीं खाता।

सेवा हीरक की जिद्द को कई बार देख चुकी थी, उसने हीरक से भोजन का अनुरोध न करके कहा—किन्तु आप को भी देर हो जायगी इससे क्या फायदा ?

हीरक ने उत्तर दिया—होने दो ! अगर मैं खालूँगा, तो तुम्हें फिर किसी तरह का फ़िक्र नहीं रहेगा। तुम धीरे २ कार्य करोगी।

सेवा हीरक के उदार हृदय का परिचय पाकर बड़ी प्रसन्न हुई । बाहर जाती २ बोली—अभी आती हूँ ।

किन्तु सेवा किसी भी तरह से जल्दी नहीं लौट सकी । बाहर के आये हुए समस्त आदमियों को खिला, दास दासियों को परोस कर जब वह खाने बैठी, तब रात के १० बज चुके थे, वह हाथ मुँह धोकर हीरक के पास जल्दी २ पहुँची; और बोली—आज बहुत देर हो गई, आपने अभी तक भोजन नहीं किया ?

हीरक ने पूछा—तुमने खा लिया न ?

हीरक को भोजन खिलाने की तैयारी करते हुए उसने कहा—हाँ ! सेवा की इस कार्य-शैली पर हीरक मुग्ध हो गया था । उसने पूछा—क्या तुम यहाँ केवल दुःख उठाने ही को आई हो ?

हीरक के सन्देह को दूर करने के लिये सेवा ने कहा—मैं तो दुःख को सुख मान कर ही यहाँ आई हूँ, यहाँ अच्छी तरह से रहती हूँ । पुष्प वाटिका का आकर्षण ही मुझे यहाँ तक खींच लाया है । मेरे जीवन की एक प्रधान वासना यहाँ आकर पूर्ण हुई है । इसके बदले आप को कुछ आराम एवं शान्ति देने की चेष्टा करने के लिये तो मैं बाध्य ही हूँ ।

सेवा का यह उत्तर सुनकर हीरक फिर उदास हो गया । उसने सोचा; कि सेवा यहाँ वाटिका एवं फूलों के लोभ से आई है; सेवा इस लिये कर्तव्य पाश से बंध करही मेरी शुश्रूषा करती है, मुझे स्वामी समझ कर नहीं । इससे हीरक को बड़ा गर्व हुआ । गर्व में हीरक भूल गया, कि अपरिचित व्यक्ति एकाएक प्रेम सूत्र में नहीं बँध सकते । उसने विरक्त होकर कहा—बस, अब और नहीं खाऊँगा ।

सेवा ने व्यस्त होकर कहा—कुछ भी नहीं खाया, यह क्या? बहुत देर हो जाने से भूख मारी गई है, यह देखती हूं। कुछ तो और खाइये न?

गम्भीर चिन्ता में निमग्न होकर हीरक ने कहा—अब और खाने की इच्छा नहीं है।

सेवा हीरक को खिलाना बन्द करके एक कुर्सी पर जा बैठी; और बोली—आज क्या पढ़कर सुनाऊँ?

हीरक—आज कुछ नहीं सुनना चाहता हूँ, मुझे नींद आती है।

सेवा—अच्छा, तो आप सो जाइये, मैं बैठी हूँ। हीरक का हृदय तब अभिमान और क्रोध से भर गया था। वह एकान्त में खूब खुल २ कर रोना चाहता था। और इसलिये सेवा से कुछ सुनने के लिये मना कर दिया था, कि जिससे वह वहाँ से चली जाय। वह चुपचाप सो रहा; और धीरे २ आँखें बन्द करके रह २ कर ज़ोर २ से साँसें भरने लगा; कि जिससे सेवा उसे सोता हुआ देख कर चली जाय। सेवा हीरक की चालाकी समझ न सकी। वह धीरे २ कुछ देर ठहर कर बाहर चली गई। सारे दिन की थकी हुई होने से सेवा कुछ विश्राम करना चाहती थी। उसकी आँखों में निद्रा भर आई थी। सेवा के चले जाने के पश्चात् वन्य स्रोत को खुली हुई खरतर धारा के समान हीरक भी फूट २ कर रोने लगा।

दिन भर की थकी होने के कारण बिछौने पर लेटते ही सेवा को गहरी नींद आ गई।

लोकनाथ भोजन करके हीरक के कमरे के बाहर बरामदे में अपना बिछौना बिछा रहा था; उसे क्रंदन स्वर सुनाई पड़ा। वह कुछ देर कान लगाकर सुनता रहा। कमरे के अन्दर ताक

कर देखा, तो हीरक रो रहा है। वह कामिनी के पास गया और बोला—कामिनी! बहूरानी सो गईं क्या?

कामिनी ने सरोते से सुपारी काटकर पान में रखते हुए कहा—बहूरानी तो अभी जाकर सोई हैं। अभी तो सोई भी न होंगी। क्यों?

लोकनाथ उदास होकर बोला—बाबू फूट २ कर रो रहे हैं। बहूरानी के आजाने से शायद चुप हो जायँ।

पान का बीड़ा बनाकर उसे मुँह फेरकर खाते हुए कामिनी ने कहा—अच्छा, अभी बुला लाती हूँ।

सेवा के कमरे के पास से वापस आकर कामिनी ने कहा—बहूरानी सो रही हैं। कई बार पुकारा, किन्तु कुछ भी उत्तर न मिला।

लोकनाथ उदास होकर चला गया। जाकर फिर देखा—हीरक तब भी रो रहा था। लोकनाथ ने कामिनी के पास जाकर कहा—बहूरानी को जगाही दो, बाबू अभी रो रहे हैं। लोकनाथ की काँपती हुई आवाज़ को सुनकर कामिनी ने सिर उठाकर उसकी ओर देखा; कि उसकी आँखों में आँसू की बूँदें चमक रही थीं। कामिनी चुपचाप चली गई।

यौवनावस्था की निद्रा स्वभावतः ही बहुत गंभीर होती है। उसपर सारे दिन की थकी होने के कारण सेवा बड़ी गम्भीर निद्रा में अचेत थी। कामिनी ने कई बार पुकारा, किन्तु उसकी नींद न खुली। उसने जब हाथ पकड़ कर हिलाया तब सेवा को होश आया। निद्रा की खुमारी में सेवा ने पूछा—क्या है?

कामिनी—लोकनाथ कहता है; कि बाबू फूट २ कर रो रहे

हैं। सेवा चौंक कर उठ बैठी; और बोली, कह दो; कि मैं अभी आती हूँ।

बिछौने से उठकर सेवा हाथ मुंह धो, कपड़े पहिन कर हीरक के कमरे की ओर चली। बाहर से पैरों की आवाज़ सुनकर हीरक ने आंसू भरे नेत्रों से द्वार की ओर देखा; कि सेवा जल्दी २ उसी ओर आ रही है। सेवा ने उसका विलाप, जिसे वह उससे छिपाना चाहता था, सुन लिया जान कर हीरक को बड़ी लज्जा हुई।

हीरक ने सोचा—सेवा आते ही इसके लिए मेरा तिरस्कार करेगी, किन्तु सेवा आकर कुछ न बोली। चुपचाप उसने तौलिए से हीरक का मुख पोंछ दिया। हीरक को शान्त देखकर सेवा ने बिछौने के पास बैठकर पूछा—निद्रा नहीं आती? कुछ पढ़कर ही सुनाऊँ? सुनते २ आपको निद्रा आ जायगी।

सेवा की यह असामयिक बात हीरक को अच्छी न लगी, किन्तु वह उसको रोक भी न सका। सेवा हीरक के पलंग के बराबर लगी हुई आलमारी में से एक कविता की पुस्तक निकाल कर उसे पढ़ने लगी।

"कल प्राणों में प्राण दिये थी, आज नहीं है साथ।
नितान्त ही मामूली क्या, यह लीला, हे नाथ!
तेरी सदा अजब माया है, पर यह दुःखा घात?
किया नाथ क्या कभी किसी पर ऐसा वज्रनिपात?
सूर्य लोक है वही, किन्तु अब वैसी हँसी नहीं बाक़ी।
चन्द्रलोक है, नहीं मगर अब वैसीरूपछटा बाँकी॥
शून्य पड़ी है देह, गेहका छीन लिया सारा आनन्द।
जीवित हैं ये प्राण, उन्हें भी लेलो हे ईश्वर! सानन्द॥

वैसी सुन्दर मूर्त्ति मनोहर, तैसे ही वे दानी हाथ!
वैसी मन को हरने वाली हँसी कहाँ है, नाथ?
उसके बिना देह यह सूनी, सूना है, सारा संसार।
नितान्त ही मामूली था क्या, नटनागर? वहवार?

सेवा की मधुर सुरीली आवाज़ को सुन कर हीरक का मन प्रसन्न हो गया। दीर्घ निश्वास लेकर उसने कहा—सेवा! ऐसी ही कोई कविता और पढ़ो। सेवा फिर पढ़ने लगी।

कर्म के सम मिलता भव भोग!
कोई उसे मानता विधि है या कोई सयोग॥
जैसा रहा मनोरथ वैसा मिला हमें सुख, रोग;
उन्हें भोगते घबराते हैं क्यों? अज्ञानी लोग?

सेवा के पढ़ने में बाधा देकर हीरक ने पूछा—क्या सेवा! तुम गाना भी गा सकती हो?

सेवा कुछ समय तक चुप रही। फिर संकोच भरे स्वर में उसने कहा—हाँ!

प्रसन्न हो कर हीरक ने कहा—तब क्या; तुम एक गाना गाओगी? मैं सुनना चाहता हूँ। खूब दुःख एवं शोक से परिपूर्ण गाना गाओ।

सेवा उठी, और हारमोनियम के मधुर स्वर में स्वर मिला कर गाना गाने लगी।

"जगत सकल स्वपन प्राय!
कितकौं छुपी कित जाय!!
कुसुम कानन हुआ है म्लान, कोकिल न सुनाती सुमधुर तान!!
सकल जगत लगत शून्य, तव बिन हाय!
तव बिन हाय!! जगत सकल० !!

हीरक मुग्ध हो गया, उसे जान पड़ा मानों उस संगीत में मानवी शब्द नहीं हैं; मानों किसी गन्धर्व कन्या का दिव्य संगीत, लोक लोकान्तर से बहता हुआ चला आ रहा है। हीरक आनन्द में मग्न होकर चुपचाप सुनने लगा। उस मधुरस्वर को सुनते सुनते उसे निद्रा आ गई। वह कब सोया, सेवा यह न जान सकी। बहुत देर बाद जब वह रुकी; तो उसे संदेह हुआ; कि शायद हीरक को नींद आ गई। बिछौनेके पास झुक कर देखा—हीरक वास्तव में सो रहा था। हीरक की निद्रा को और भी गम्भीर बनाने के लिए वह उसके बिछौने पर बैठ कर उसके तलवे सराहने लगी। परिश्रम से व्याकुल सेवा के नेत्रों में नींद घुलने लगी। धीरे २ वह भी अचेत हो गई।

* * * * * * *

प्रातःकाल पक्षियों की मृदु चुहचुहाट से सेवा की जब नींद खुली; वह उठ खड़ी हुई। उसने देखा कि सूर्य की किरणों से कमरा प्रकाशित हो रहा है। हीरक उसकी ओर ताक रहा था। वह न जाने कब हीरक के बिछौने पर ही सो गई! अपने आप को धिक्कारती हुई, मारे शरम के वह पलंग से उतरपड़ी। हीरक के चेहरे पर अप्रसन्नता के भाव देख कर; वह और भी सकुचा गई। उसके मुहँ से कोई बात न निकली। जल्दी २ सेवा कमरे से बाहर चली गई। बाहर उसने लोकनाथ को खड़े हुए मुस्कुराते पाया। सेवा आँखें फिरा कर दूसरी ओर ताकती हुई जाने लगी। वृद्ध लोकनाथ ने मुस्कुराते हुए पूछा—बहूरानी! बाबू जग गये क्या?

सेवा और भी लज्जित हुई; और जाते २ धीमे स्वर से कह गई—हाँ!

तेरहवाँ परिच्छेद ।

प्रणय पुष्प ।

"Beauty is truth and truth Beauty.
That is all I know our the earth and all I need to know!"
—Keats.

हीरक के पास; उसके बिछौने पर—सेवा क्लान्तिवश आलस्यवश, अपनी भूल से—सो जाने पर जितनी लज्जित हुई, उतनी ही उसे एक अपूर्व एवं अनिर्वचनीय प्रसन्नता भी हुई। सेवा को इस नूतन प्रसन्नता की लज्जा से हीरक के पास जाते हुए एक प्रकार का संकोच होने लगा। पुस्तकों में नव-वधुओं की लज्जा एवं प्रणय-कहानी को पढ़कर सेवा को एक प्रकार का कौतुक होता था, किन्तु आज के दृश्य की मनोहरता पर वह मुग्ध हो गई। पति के लिए स्त्री, और स्त्री के लिए पति की व्याकुलता एवं उनके परस्पर मिलन के सुख, जो आज तक उसके लिए साहित्यिक कल्पना की सामग्री मात्र थे, उनसे सेवा आज कुछ कुछ परिचित हो गयी। और इस नूतन परिचय के आनन्द ने उसे उत्फुल्ल कर दिया। संकोच करती हुई वह हीरक के कमरे में गयी। बार २ उसके मुख पर लज्जा एवं प्रसन्नता की आभा आ जाती थी। उसके इस आनन्द को हीरक जान न जाय, यह सोचकर वह लज्जा से सिर नीचा किये थी। अन्त में जब बहुत ही विवश हो जाती, तो उस कमरे से चली जाती थी।

हीरक सेवा के मन के भावों को ताड़ चुका था, इसलिए और भी विरक्त सा हो गया था। उसे संदेह होता था, कि सेवा जानबूझ कर ही रमा के सिंहासन पर क़ब्जा जमाने की

प्राणपण से चेष्टा कर रही है। श्री० रामचन्द्र के परित्यक्त सिंहासन पर; जिस प्रकार भरत ने रामचंद्र की पादुका को प्रतिष्ठित करके १४ वर्ष तक रामचंद्र से फिर मिलने की प्रतीक्षा की थी, उसी प्रकार हीरक भी रमा को छोड़े हुए सिंहासन पर; रमा की अतीत स्मृति को प्रतिष्ठित करके; उसके साथ फिर जा मिलने की आशा में दिन गिन रहा था। बीचही में सेवा, न जाने कहां से आकर उसके हृदय पर कब्ज़ा जमाने के लिए सेंध मारने की चेष्टा कर रही है। इसी आशंका व भय के कारण हीरक सेवा के प्रत्येक निष्कपट व्यवहार को भी शठता भरा संदेह करने लगा। उसने मनही मन संकल्प किया, कि सेवा की धूर्त्तता में वह कभी न लुभायगा। वह किसी प्रकार से भी सेवा को अपने मन पर क़ब्जा न करने देगा। उसने स्वयमेव अपने और सेवा के मन पर कड़ा पहरा देने का निश्चय किया।

हीरक, जब मन ही मन इस प्रकार के संकल्प कर रहा था, ठीक उसी समय लोकनाथ उस कमरे में आया। उसे देख कर हीरक को संदेह हुआ, कि वह किसी बात को छिपाता है। उत्सुक एवं व्यग्र होकर हीरक ने पूछा—क्या है; रे लोकनाथ दादा?

लोकनाथ ने इतस्ततः करते हुए कहा—कुछ नहीं, भाई। उसके इस उत्तर से हीरक को कुछ संदेह हो गया। उसने संदेह भरी दृष्टि से लोकनाथ की ओर देखा; तो वह मुस्कुरा रहा था।

इससे हीरक को, सेवा पर क्रोध हुआ। वह दास दासियों को अपने वश में करके अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए कोई षडयन्त्र रच रही है, इसमें हीरक को बिलकुल संदेह न रहा। किन्तु उसका पुराना सेवक लोकनाथ भी, उस नवागता, स्वार्थिनी,

सुखान्वेषिणी, सेवा के साथ मिलकर; मुझे धोखा देना चाहता है । इससे हीरक को बड़ा क्रोध आया । क्रोध से उसके अंग थरथर काँपने लगे । लोकनाथ उससे क्या छिपाता है, इसको जानने के लिए उसने अपना मुंह फिरा लिया, एवं रह रहकर तिरछी नज़र से उसे देखने लगा। हीरक ने देखा; कि लोकनाथ दीवार के सहारे लगकर पास ही लगी हुई आलमारी की पुस्तकों को इतस्ततः कर रहा है। किन्तु उसकी कार्य-प्रणाली बताती है, कि यह कार्य केवल बहाना है, अपने उद्देश्य को छिपाने का साधन है। हीरक ने आँखें मूंद लीं। और धीरे २ वह छिपी नज़र से लोकनाथ की गति को देखता रहा। लोक-नाथ ने भी दो बार तिरछी नज़र से हीरक की ओर देखा। फिर जल्दी से मुड़कर दीवार पर लगे हुए; रमा के चित्र को उतार कर, वह चुपचाप जल्दी जल्दी उस कमरे से बाहर होने लगा। यह सब बात देखकर हीरक ने सोचा, कि रमा की प्रति-मूर्त्ति को मेरे सामने से हटा देने के लिए ही सेवा ने इसे भेजा था।

हमारा सबसे अधिक पुराना और विश्वास पात्र भृत्य लोकनाथ ! सेवा की इस दुष्ट इच्छा को पूरा करना चाहता है; यह सोच वह क्रोध से लाल हो गया। एकाएक ज़ोर से वह अपने बिछौने पर उठ कर बैठ गया; और सारे मकान को गुँजाते हुए ज़ोर से चिल्ला उठा—"सूवर कहीं का" ! साथ ही साथ पास में रखी हुई टेबिल पर से चाँदी का गिलास उठा कर लोकनाथ पर ज़ोर से फेंक मारा। हीरक की चिल्लाहट सुन कर ज्यों ही उसने पीछे मुड़कर देखा, वैसे ही गिलास उसके कपाल में एक गहरा घाव करके; पत्थर की बनी हुई फ़र्श पर "झननननन" करता हुआ जा गिरा। सारी हवेली भी प्रतिध्वनित
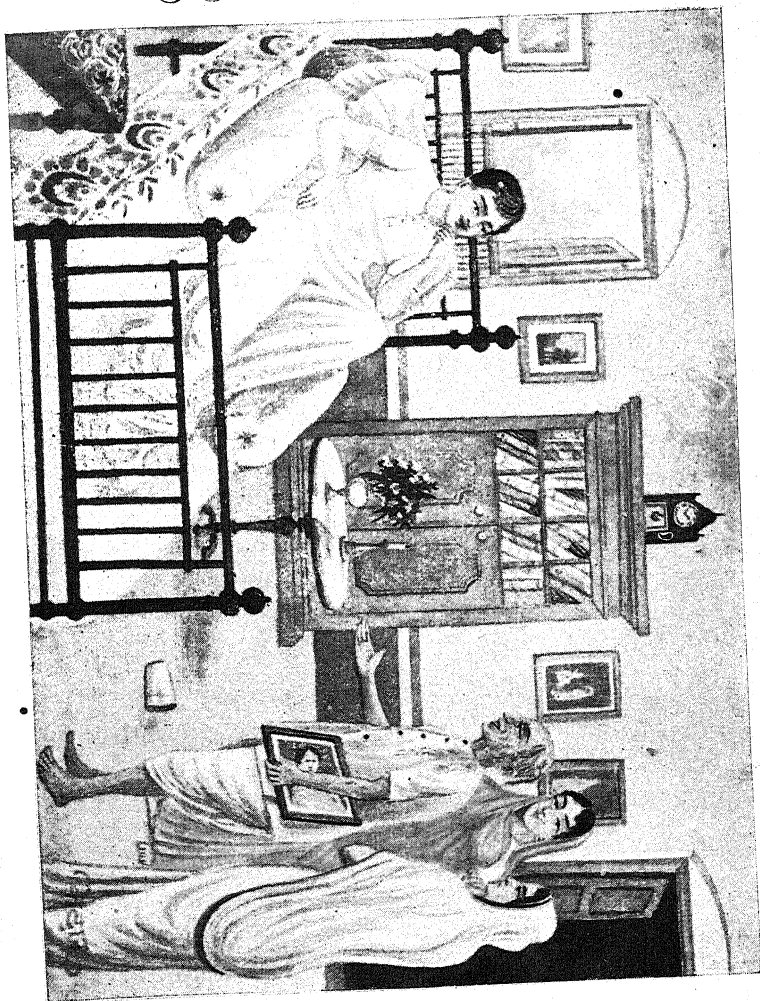
सिरसे निकलती हुई खूनकी धाराकी परवाह न कर, हीरक मुस्कुराता हुआ बोला—भाई! मेरे कारण तुम अपने आपही उठतो सके हो!

(पृष्ठ ११२)

हो कर "झननननन" करने लगी। लोकनाथ के सिर से खून की धारा बहने लगी, किन्तु उसने इस ओर ध्यान न दिया। मुस्कुराता हुआ वह बोला—भाई ! आज तुम अपने आप ही मेरे कारण उठ तो सके हो !

हीरक की चिल्लाहट एवं गिलास की झनझनाहट को सुन कर; सेवा, कामिनी; और अन्य कई दासदासी भागते हुए आये। उन्हें यह देख कर बड़ा विस्मय हुआ; कि हीरक बिछौने पर बैठा है। और अपने सिर की चोट को भुला कर मुस्कुराते हुए; लोकनाथ कह रहा है। आज तुम अपने आप उठ कर मुझे मार तो सके हो ! भाई !

हीरक आज अपने आप ही उठ कर मुझे मार सका यह देख कर लोकनाथ को बड़ा आनन्द हुआ। लोकनाथ के कपाल से रक्त बहता देखकर, हीरक भी बड़ा लज्जित हुआ। उसने सोचा, रमा की अवहेलना करने के मुख्य कारण दो ही हैं। लोकनाथ और सेवा, इनमें एक तो बिचारा अशिक्षित, एवं सेवक ही है; और दूसरी; रमा से सर्वथा अपरिचित है। हीरक लज्जित और शान्त हुआ। क्रोध को भूल कर उसने मृदु स्वर से उत्तर दिया—तू रमा की तस्वीर को इस तरह क्यों चुरा कर ले जाता था ? मुझे इसीसे क्रोध आया और मैंने तेरे ऊपर गिलास दे मारा।

लोकनाथ, हीरक की इस बात पर खिलखिला कर हँसने लगा; मानों उसने किसी अच्छे कार्य के बदले पारितोषक तथा प्रशंसा पाई हो ! उसके हँसने से यह बात जानी जाती थी, कि लोकनाथ के लिये वह चोरी ही गौरवदायिनी थी; और उस गिलास से निकला रक्त मानो उसकी समस्त निष्कपट सेवाओं का चरम पुरस्कार था।

सेवा ने कपड़ा जला कर लोकनाथ के घाव में भर दिया। और फिर सेवा के कमरे में गई ।

सेवा हीरक के पास जा कर मुस्कुराते हुए बोली—इस फोटो को मैंने ही मँगवाया था; उसका कुछ भी दोष नहीं। कलकत्ते से एक निपुण चित्रकार को बुलाया है। मैंने सोचा था, कि रमा और माँ का आयलपेरिटङ्ग चित्र उतरवा कर फिर आप को दिखाऊँगी। यही सोच कर मैंने आपको कुछ न कहा और लोकनाथ दादा को चुप के से चित्र उतार लाने के लिये कहा; आप मुझे इसके लिये क्षमा करें।

सेवा और लोकनाथ पर व्यर्थ संदेह करने से हीरक बड़ा लज्जित हुआ। सेवा के कौतुकपूर्ण हृदय का पता पाकर हीरक बड़ा प्रसन्न हुआ। अभी तक हीरक बैठा ही था। अब वह सोना चाहता था, परन्तु सेवा ने उसे अपनी कोमल बाहों से लपेट कर न सोने दिया। उल्लसित हृदय से, प्रेममय हो सेवा बोली :—जब आप उठ बैठे हैं; तो कृपा करके अब न सोवें। मैंने इन्वेलिड चेयर मंगा रखी है। आप उस पर बैठिये, चलिये एक बार बाग़ की सैर कर आवें।

सेवा ने एक इन्वेलिड चेयर पहिले ही मँगा रक्खी थी; क्योंकि उसे मालूम था, कि जब हीरक स्वस्थ हो जायगा, तो इससे विशेष सुभीता और आराम मिलेगा। सेवा की इस बुद्धिमानी से हीरक बहुत प्रसन्न हुआ; वह विचार कर रहा था; कि मैं उठूँ या नहीं। इतने ही में लोकनाथ सेवा का इशारा पाकर, एक पहियेदार आराम कुर्सी ले आया। मेरे भला चंगा हो जाने के लिये सेवा को इतनी आतुरता एवं उत्कण्ठा! यह सोच कर हीरक और मुग्ध हुआ। वह कोई बहाना तक न ढूंढ पाया। सेवा के आदेश पाते ही नौकरों ने प्रसन्नतापूर्वक

हीरक को उठा कर कुर्सी पर बैठा दिया। सेवा ने पीठ पीछे एक मुलायम तकिया लगा दिया। बाद में वह स्वयं उसे ढकेलती हुई नीचे ले चली। हीरक बहुत दिनों से अपने कमरे से बाहर न निकला था, उसने प्रसन्न हो कर कहा—तुम क्यों तकलीफ़ उठाती हो, किसी नौकर को दे दो।

सेवा ने गद्गद् होकर कहा—माँ से मैंने प्रतिज्ञा की थी; कि मैं आप को स्वस्थ कर दूँगी। अगर माँ अभी तक जीवित रहतीं, तो आप को भलाचंगा होते देखकर वे भी अच्छी हो जातीं।

हीरक ने भी मन ही मन में सोचा—कि अगर आज रमा भी होती; तो क्या ही अच्छा होता?

सेवा हीरक की कुर्सी को ठेलती हुई सीढ़ियों तक ले आयी। यहां से नौकरों ने उठाकर उसे धीरे २ नीचे उतारा और बाग़ तक ले गये।

हीरक ने बाग में जाते ही देखा, कि उसकी सुंदरता पहिले से कई गुनी अधिक हो गई है। उसका रूप बिलकुल ही पलट गया था। क्यारियों में स्थान २ पर मौसिमी फूलों के पौधे लगे थे। रास्ते के दोनों ओर मेंहदी की कतार थी। सेवा ने दो सुन्दर हौज़ बनवाये थे। छोटे हौज़ में लाल, नीले और शुभ्र फूलों से लदे हुए अनेकों पौधे जल में लगे हुए लहरा रहे थे, और दूसरे बड़े हौज़ में लाल कमल खूब खिल रहा था। शरदलक्ष्मी ने अपने सुमधुर हास्य से सारे उद्यान की सुंदरता को चौगुना कर रखा था। बड़े हौज़ में कई हंस तैर रहे थे। एक रास्ते के दोनों ओर शिरीश वृक्ष लगे हुए फूलों के बोझ से झुके जारहे थे। उन वृक्षों के नीचे पड़े हुए फूल ऐसे शोभित होते थे, मानों प्रकृति देवी की सुंदर फूल शय्या हो! एक पथ के दोनों ओर केवल फलों ही के वृक्ष दिखाई देते थे। आम, जामुन, अनार,

लीची, अमरूद, नारंगी आदि के वृक्ष एक दूसरे से मिलकर चूम रहे थे। यह दृश्य देखकर हीरक को जापान के बागीचों की याद आ गई; उसने पढ़ा था; कि जापान में भी इसी तरह रास्ते के दोनों ओर चैरी और बेर के पेड़ लगे रहते हैं। उस देश की सुन्दर शोभा को, जिसकी वह आज तक कल्पना मात्र किया करता था, अपने उद्यान में पाकर आनन्द के मारे हीरक का हृदय बासों उछलने लगा।

सेवा खुद ही कुर्सी को ठेलती हुई बाग के चारों ओर फिर रही थी। हीरक मन ही मन सेवा की निपुणता एवं सौंदर्य प्रेम की प्रसंशा करने लगा। थोड़ी ही देर में मस्तक ऊपर उठा उल्लसित होकर हीरक ने पूछा—वास्तव में यह सारी कृपा तुम्हारी ही है। तुम सारे दिन तो मेरे पास रहती थी? फिर कैसे इस उद्यान को बनाया? सेवा ने कहा—उद्यान से बढ़कर कोई भी वस्तु मुझे प्यारी नहीं है। मेरी कल्पनानुसार मैंने इसे सजाया है—जब अवकाश पाती थी, इधर आ जाया करती थी।

हीरक, अकस्मात्, उदास हो गया। "उद्यान से बढ़कर कोई भी वस्तु मुझे प्यारी नहीं है" यह वाक्य सुनकर हीरक को बड़ा दुःख हुआ। जिस उद्यान को देखकर वह कुछ ही देर पहले बड़ा प्रसन्न हुआ था, वही अब उसे सूखा और बुरा प्रतीत होने लगा। थोड़ी देर पहले जिस उद्यान की सुंदरता ने उसको मुग्ध कर दिया था, वही सुन्दरता अब उसकी आँखों में शूलसी खटकने लगी।

हीरक को चुप देखकर सेवा ने पूछा—क्या अब वापिस लौट चलें? पहले ही दिन अधिक घूमना ठीक नहीं होगा।

हीरक ने कुछ उत्तर न दिया। सेवा हीरक को लेकर वापस

चली । आते हुए उत्साहवश हीरक को सीढ़ियों से नीचे उत-रना कष्टदायी न मालूम पड़ा, किन्तु अब उसे ऊपर चढ़ना बड़ा असाध्य जान पड़ा। वह विरक्त होकर बोला—सेवा ! तुम बहुत तंग करती हो, खींचातानी करके ऊपर से नीचे लाईं और खेंचातानी करके नीचे से फिर ऊपर ले जाओगी। तुम्हारा यह उत्पात मुझे अच्छा नहीं लगता ।

हँसते हुए सेवा ने कहा—जब तक आप स्वयं ऊपर न चढ़ सकेंगे, तब तक मैं भी आपको ऊपर न ले जाऊँगी ।

हीरक ने अधिक आवेश में आकर पूछा—तो क्या मैं चूल्हे में रहूँगा ?

कौतुक भरे स्वर से सेवा ने कहा—चलिए न ? बताऊँ ।

सेवा के इस उत्तर से हीरक विस्मित हो गया । वापस आकर उसने देखा; कि ऊपर दालान में चढ़ने के लिये सीढ़ियों के पास ही एक ढालू रास्ता बना हुआ है । सेवा उस रास्ते से अनायास ही गाड़ी को ऊपर ठेलती हुई; दालान में चढ़ गई । हीरक बड़ा विस्मित हुआ । अपनी विस्मय भरी दृष्टि से वह चारों ओर देखने लगा । सेवा उसकी गाड़ी को सामने के एक कमरे में ले गई । वह मकान जो पहले बिलकुल अव्यवस्थित रूप में था, उसे एक व्यवस्थित शयनागार के रूप में पाकर हीरक बड़ा प्रसन्न हुआ ।

हीरक ने पूछा—यहाँ इतनी सजावट क्यों की ?

सेवा ने उत्तर दिया—आप स्वस्थ हो जायँ; और दोनों समय बाग में सैर करने की इच्छा आप के हृदय में पैदा हो, इसी लिए मैंने इसकी सजावट की ।

सेवा के इस उत्तर से हीरक सन्तुष्ट हुआ ।

फिर से नौकरों ने हीरक को उठाकर पलंग पर लिटा

दिया। हीरक बिछौने पर ही लेटे २ आँखें फिरा कर अपने कमरे की सजावट देखने लगा। उसने देखा कि बिछौने के पास ही एक सुन्दर पींजरे में दो हिमालयी तोते आपस में खेल रहे थे। दोनों तरफ सेवा की फूलदानियाँ लगी थीं, उसमें लगे हुए तरह २ के फूलों ने सारे कमरे को सुवासित कर रक्खा था। हीरक आनन्द में निमग्न हो गया। और प्रसन्नता से उन पक्षियों को देखने लगा। सेवा भी कुछ देर ठहर कर वहाँ से चली गयी। इतने ही में संध्या हो गई; लोकनाथ, एक बड़ा लैम्प जला गया।

चौदहवाँ परिच्छेद ।

परोपकाराय सतां विभूतयः ।

सेवा ताड़ गई कि हीरक का उत्साह, जो उसने सबसे पहले उद्यान में जा कर देखा था, अब न रहा। वह अपने बिछौने पर से नहीं उठना चाहता। उसके उठने का आग्रह करने पर वह बड़ा विरक्त हो जाता है। सेवा अब एक नयी तदबीर सोचने लगी। उसे याद आया कि आनन्द बाबू जिस दिन मुझसे विवाह करने के लिए हीरक को मनाने गये थे, उस दिन हीरक ने विरक्त होकर कहा था कि "मैं अपनी सारी सम्पत्ति और ज़मींदारी को; रमा के नाम से एक कन्या पाठशाला खोलने के लिए लगा दूँगा। अब यदि मैं इस सत्कार्य के लिए हीरक को उत्साहित कर सकूँ; तो शायद हीरक प्रसन्न होगा। यह सोच कर उसने एक दिन हीरक से कहा—देखिये, आप तो अकेले ही व्यक्ति हैं, इतनी बड़ी जमींदारी को आप क्या करेंगे?

"अकेले व्यक्ति" सेवा के ये शब्द विद्युत शक्ति के समान हीरक को मर्म स्पर्शी मालूम हुए। उसने विरक्त हो कर सेवा की ओर देखा। सेवा कहने लगी—आप अपनी ज़मींदारी को माँ और दीदी के नाम से दान न कर दीजिए! यदि उससे स्त्री शिक्षा की व्यवस्था हो जाय, तो देश का भारी कल्याण हो।

हीरक ने क्रुद्ध होकर एक दिन यह बात स्वयमेव कही थी, किन्तु आज हीरक को सेवा का यह प्रस्ताव बिलकुल अच्छा न लगा। सेवा मुझे देश के कल्याण का उपदेश देने आई है यह जान कर उसे बड़ा क्रोध आया। साथ ही सेवा ने कहा था, कि आप अकेले आदमी हैं। इस पर हीरक विचार करने लगा, क्या सेवा मुझे अपना पति नहीं समझती? क्या सेवा की ये सब शुश्रूषा वेतन प्राप्त धात्री की कर्तव्य निष्ठा; एवं माँ के सामने की हुई प्रतिज्ञा पालन मात्र ही है? हीरक का मन क्षोभ और दुःख से अथाह विचार सागर में लीन हो गया। उसने कुछ उत्तर न दिया। सेवा ने फिर कहा—आप एक पढे लिखे युवक हैं। आप को अपने खर्च के लिए ५००) रु० मासिक काफ़ी हैं। आपकी आय करीब बत्तीस हज़ार रुपये साल की है। एक साल में ७–८ हज़ार रुपये आप के लिये बहुत हैं। ऐसा करने से हर एक साल आप चौबीस पचीस हज़ार रुपये, स्त्री-शिक्षा में व्यय कर सकेंगे। नकद एवं बैंकों में प्रायः २ लाख रुपये जमा हैं। उस रुपये से स्कूल बिल्डिङ्ग और शिक्षा आदि का यथेष्ट प्रबंध हो सकता है!

हीरक बहुत क्रुद्ध हो उठा। बड़ी मुश्किल से वह बोल सका—तुम इतने से थोड़े दिनों ही में मेरी पूँजी आदि; सब की ख़बर पाचुकी हो? स्त्री-शिक्षा एवं मेरे घरू ख़र्च का तो

तुमने बँटवारा कर दिया, किन्तु अपने लिए तुमने क्या व्यवस्था सोची ?

हीरक के इस प्रश्न से सेवा कुछ सकुचा गई। वह कहना चाहती थी कि—"मैं तो आप के साथ हूँ। मेरी व्यवस्था आप ही करेंगे," किन्तु हीरक के मुख की आकृति देख कर उसे यह कहने का साहस नहीं हुआ। अपनी विलासिता की क्षणिक सुखेच्छाओं का दमन करके उसने उतावले स्वर में कहा—मेरी व्यवस्था तो मैंने पहले ही कर ली है। मनुष्य मात्र स्वार्थी होता है, वह अपने स्वार्थ की बात सब से पहले सोचता है। मैं गर्ल्स स्कूल में एक अध्यापिका का काम किया करूँगी। जल्दी से बात के सूझ आने से सेवा प्रसन्न हुई। सेवा अपने आप को अभी तक एक सेवक मात्र समझती है ? और आगे भी सेवकाई ही करना चाहती है, यह हीरक को बहुत बुरा लगा।

अभिमान भरे स्वर से हीरक बोला; अच्छा—मैनेजर बाबू से कहकर एक दानपत्र बनवाऊँगा।

सेवा ने प्रफुल्ल होकर कहा—एक दान-पत्र मैंने भी तयार कर रखा है—क्या उसे ले आऊँ ?

सेवा के इस आग्रह को देखकर हीरक बहुत नाराज़ हुआ। उसने सोचा; कि सेवा जल्दी में यह सब काण्ड रचकर उसकी सारी सम्पत्ति हड़प कर जाना चाहती है। हीरक ने कहा—कहाँ है ? ले आओ ?

जल्दी से सेवा ने एक दराज़ खोला, और एक पक्का स्टाम्प निकालकर हीरक को दिया। सेवा के कार्य से वह जितना ही (धिक विस्मित होता जाता था, उससे कहीं अधिक विरक्त भी

होता जाता था। उसने देखा, कि एक स्टाम्प पत्र पर एक पक्का वसीयतनामा लिखा है। दाता एवं साक्षियों के हस्ताक्षर होने ही बाक़ी हैं। हीरक बड़े गौर से उस दानपत्र को पढ़ने लगा। उसमें लिखा था—"मैं अपनी स्वर्गीय माता की स्मृति में, "सुमति कन्या विद्यालय" की स्थापना के लिए, एवं इस विद्यालय से जो लड़कियाँ परीक्षा में उत्तीर्ण हों, उनको उच्च शिक्षा दिलाने के लिए छात्रवृत्ति देने को; अपनी सारी स्थावर और जंगम सम्पत्ति दान करता हूँ। केवल इस पुष्पोद्यान और हवेली पर मैं जब तक बचा रहूँगा; मेरा पूरी तरह से क़ब्ज़ा रहेगा। और मैं अपनी सम्पत्ति की आमदनी से ५००) रु० मासिक लेता रहूँगा। मेरे मरने के बाद यह हवेली व पुष्पोद्यान भी उक्त विद्यालय की सम्पत्ति होंगे। अगर कोई भी बालिका यहाँ की उच्च शिक्षा को समाप्त करके आगे पढ़ना चाहेगी, तो उसे इन रुपयों में से "हीरक वृत्ति" भी दी जायगी। इसके ट्रस्टी ३ व्यक्ति होंगे। प्रथम दाता हीरक स्वयं, दूसरे आनन्द बाबू, और तीसरे सेवा। इन तीनों में से अगर किसी एक की भी मृत्यु हो जायगी; तो शेष दोनों ट्रस्टियों को अधिकार होगा; कि वे किसी व्यक्ति को ट्रस्टी चुन लें।"

मुझसे छिपाकर सेवा, आज तक इस गूढ़ उपद्रव का आयोजन कर रही थी; यह सोच कर हीरक बुरी तरह चिढ़ गया। उसने लक्ष्य भी न दिया, कि सेवा ने अपने लिए हीरक की सम्पत्ति में से एक पैसा भी न लिया था। हीरक का खयाल था, कि सेवा का यह सब आडम्बर उसकी सम्पत्ति हड़प कर लेने के लिए ही है। हीरक को सेवा पर बड़ी घृणा हो आई। अपने मन के भाव को छिपा कर उसने पूछा—किस किसको गवाह बनाओगी? उन सब को यहाँ

बुला लाओ। अगर सही कर सका, तो कर दूँगा। पीछे से रजिस्ट्री होती रहेगी।

सहज ही हीरक को सम्मत होते हुए देख कर सेवा बड़ी खुश हुई। उसने कहा—अभी आती हूँ, ठहरिये।

सेवा उत्साह से बाहर आई। उसकी प्रसन्नता एवं उत्साह को देख कर हीरक का संदेह और भी दृढ़ हो गया। वह विरक्त होकर चुपचाप पड़ा रहा।

आनन्द बाबू को साथ लेकर सेवा वापस आई। उन्हें देख कर हीरक ने कहा—मैंने सर्वस्व दान कर दिया है। बाबाजी! सेवा मेरी पुरोहित है।

प्रसन्न हो कर आनन्द बाबू बोले—यह कार्य तुम्हारे समान ही महत्वाकांक्षी युवक को योग्य है। तुम्हारे जैसे पुत्ररत्न ही भारतमाता का मुखउज्ज्वल करेंगे। आज सेवा तुम्हारी उपयुक्त सहधर्मिणी है।

आनन्द बाबू की इस बात से हीरक और सेवा दोनों ने मुस्कुरा दिया। दोनों दो कारणों से हँसे। आनन्द बाबू के मुख से हीरक की प्रशंसा और उसकी सहधर्मिणी का सम्बोधन पाकर सेवा ने मुस्कुराया था। और हीरक यह सोच कर हँसा था, कि इस बहुरूपिणी शैतानी के चंगुल में यह वृद्ध तक फँस गया, और मैं युवक होते हुए भी; इसके जाल में न फँस सका। हीरक ने सोचा, कि उसने सेवा को ठग लिया है। उसने सहज ही दान पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये; और शहर के चार पाँच सम्भ्रान्त व्यक्ति उसके गवाह हुए।

जगह २ हीरक के इस छोटी सी अवस्था में किये हुए महत् दान की प्रशंसा होने लगी। दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्रों द्वारा यह खबर सारे देश में विजली की तरह फैल गई। पत्रों

में अपनी प्रशंसा पढ़कर हीरक को बड़ा आनंद होता था किन्तु वह मन ही मन सेवा पर बड़ा रुष्ट था। सेवा को देखते ही वह स्तब्ध, गम्भीर हो जाता था। उसके चेहरे से विरक्ति के चिन्ह प्रकट होने लगते थे।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद ।

हीरक की गम्भीर विरक्ति को सेवा दो तीन दिन तक न जान सकी। हीरक के द्वारा देश का कल्याण करने के लिए एक बड़ा भारी दान करा देने की निमित्त कारण होने के आनंद से, सेवा का मन बाँसों उछलने लगा। पत्रों में हीरक की प्रशंसा देखकर सेवा का हृदय आत्माभिमान से भर जाता था, और उस आनन्द के आगे उसे सारे जगत के आनन्द फीके जान पड़ते थे। किन्तु तीन चार दिन ही में सेवा हीरक की गम्भीर विरक्ति ताड़ गई। पहले हीरक उत्सुक होकर उसके आने की प्रतीक्षा किया करता था, सेवा को देखते ही उसका हृदय आनन्द से भर जाता था; किन्तु अब हीरक के आचरण में वह बात न रही। सेवा विचार में पड़ गई; क्या उसने हीरक की शुश्रूषा करने में कोई त्रुटि की है? सेवा अपनी भूल जानने का भरसक प्रयत्न करती थी; हीरक उसे उलटी ही समझता था। वह सोचता था कि, यह सब लिफाफे बाज़ी है। मकड़ी के जाले में फँसी हुई मक्खी को मकड़ी का भुलावा देना है। फन्दे पर फन्दा डाल कर मुझे अच्छी तरह जकड़ लेना ही सेवा की अभिलाषा है। सेवा ने हीरक को कई तरह से प्रसन्न करने की चेष्टा की, किन्तु उसके सब प्रयास विफल हुए। उसकी प्रफुल्लता एवं उसका उत्साह निराशा एवं मली-

नता के रूपमें बदल गया, उसे अपने अंदर एक प्रकार का न मालूम किस बात का अभाव सा जान पड़ने लगा। सेवा के कोमल हृदय पर शोक की गम्भीर छाया पड़ने लगी। हा दुर्दैव! न जाने मैंने किसको अपना सर्वस्व देडाला है! न जाने किसके साथ अपने भाग्य की डोरी को जकड़ कर बाँध डाला है! किन्तु क्या? मैं उसका बदला न पाऊँगी? प्रेम के बदले प्रेम न मिल सके, तो कुछ कृतज्ञता तो मिलनी ही चाहिये किन्तु हीरक आज कल मेरी शुश्रषा तक नहीं ग्रहण करता। बीच २ में बाधा देता है—कहता है—रहने दो, यह काम तुम मत करो। आख़िर, मैंने सब कुछ देकर यह उपेक्षा एवं यह बदला पाया? अगर मेरी कोई आवश्यकता न रही, तो न सही। मैं अपना प्रबंध स्वयं कर लूँगी। लेकिन ऐसा करने से शायद हीरक को क्लेश हो, यही सोच कर सेवा अपने इरादे को न प्रकट कर सकी। असह्य मानसिक सन्ताप से वह रात दिन जलने लगी। अब घर के धंधे से लेकर "सुमति महिला विद्यालय" तक के सारे काम उसे ही करने पड़ते थे। किन्तु इन कामों में भी सेवा का उत्साह, जो पहले था, वह नहीं रहा।

इसी तरह ४-५ मास चले गये। पतझड़ का समय है। सेवा बरामदे में बैठकर बग़ीचे को देख रही थी। उसने देखा, कि वृक्षों के पत्ते टूट २ कर गिर रहे हैं। उसके ध्यान में आया कि उसके हृदय के चारों ओर से सुख की सम्भावनाएँ इसी तरह झड़ रही हैं। वह अपना सर्वस्व दान करके भी हीरक की प्रीति ही नहीं, उसकी कृतज्ञता तक नहीं पाती थी। इसका कारण न पाकर उसे अपने ऊपर तथा हीरक पर रह २ कर बड़ा क्रोध होता था। कभी २ वह सोचती थी; कि मेरी त्रुटि से हीरक मुझ पर अप्रसन्न है। किन्तु खूब सोचकर भी वह

अपनी ग़लती न पा सकी। हीरक के इस अकारण क्रोध का कारण उसका बचपन ही है, यह सेवा ने जान लिया। अब भी हीरक बिछौने पर पड़ा हुआ है। अगर वह चाहता; तो अब तक कभी का अच्छा हो जाता; इसमें सेवा को कुछ भी संदेह न था। बिछौने पर पड़ा हुआ वह मेरी सेवाओं तक को ग्रहण नहीं करता। यह सेवा को बहुत बुरा लगा।

वह अब प्रेम से हीरक की सेवा न करती थी। बल्कि एक उच्च शिक्षा प्राप्त धात्री का कर्तव्य सोचकर ही उसकी सेवा में लीन थी।

एक दिन शाम को सेवा आम के कच्चे२ लाल पत्तों के बीच में आये हुए; आम के बौरों को लाकर फूलदानियों में सजाने लगी। सेवा की ओर एक बार टेढ़ी नज़रों से देखकर हीरक का मन खिल उठा। उसने सोचा—सेवा कवि है! सब लोग फूलदानियों में तरह २ के फूल सजाते हैं। किन्तु सेवा उनमें आमों के मुकुल सजाती है!! उसने सोचा; कि ऐसा अप्राकृतिक सौंदर्य-प्रेम, केवल कवियों को ही होता है। तो क्या सेवा भी कवि है? सेवा को हीरक कवि की उपाधि देकर; उसके इस प्रकार के विचित्र ढंग के शौक की प्रशंसा करने ही वाला था, कि एक नौकर ने आकर, सेवा के हाथ में एक विज़िटिंग कार्ड देते हुए कहा, कि एक साहब बाहर खड़े हैं, बाबू से मिलना चाहते हैं। हीरक के मन का भाव मन ही में रह गया। उसका सारा आनन्द विस्मय में परिणत होगया। उसने पूछा—कौन है, सेवा?

हीरक को अपने ऊपर रुष्ट व अप्रसन्न जान कर सेवा हीरक की ओर देखने का साहस न करती थी। पीठ फिरा कर उसने एकबार हीरक की ओर देखा; फिर उसे पढ़ने लगी—डाक्टर।

इतना सुनते ही कर्कश एवं कठोर स्वर से हीरक कह उठा डाक्टर ? किसने कहा था; डाक्टर बुलाने को ? तुम क्या नहीं जानतीं, कि मैं डाक्टर की औषधि नहीं लेना चाहता ? अगर तुमसे मेरी सेवा न हो सके, तो मत करो ? क्यों इस प्रकार तंग करती हो ?

हीरक के इस अकारण तिरस्कार से दुःख पाकर भी नम्र-स्वर से सेवा बोली—मैंने तो किसी डाक्टर को नहीं बुलाया। और किसने बुलाया, यह भी नहीं जानती। ये कोई I. M. S. हैं। शायद ज़िला सिविल सर्जन हों।

वृथा ही सेवा का तिरस्कार करके हीरक दुःखित हुआ। अप्रसन्न मुख से उसने पूछा—क्या नाम है ? पढ़ो तो।

सेवा फिर पढ़ने लगीः—डा० कुमुद शंकर।

इतना सुनते ही हीरक ने खुशी से उत्फुल्ल होकर कहा—बस, बस ! समझ गया, यह तो हमारा कुमुद है। नौकर से कह दो; उन्हें यहीं ले आवे।

सेवा की आज्ञा पाकर नौकर कमरे से चला गया। सेवा भी धीरे २ बाहर जाने लगी। हीरक ने कहा—जाओ मत सेवा ! यह तो हमारा कुमुद है।

हीरक को बड़ा आनन्द हुआ। कुमुद के आने का कार्ड पाकर हीरक को इतनी प्रसन्नता हुई; कि उसमें वह भूल गया कि, सेवा को इतना ही कहकर आगान्तुक को परिचय देना न देने के बराबर ही था। "यह तो हमारा कुमुद है। इसके सामने शरमाना मत"। यह तो अपने घर ही का आदमी है।

इतने में कुमुद आ गया। कमरे के अन्दर पैर रखते ही उसने सब से पहले बड़ी शिष्टतापूर्वक सेवा को नमस्कार किया, और फिर हीरक से हाथ मिलाकर, सेवा से बोला—

प्रणाम, भाभी! आप मेरे सामने न शर्मायें। शास्त्रों में लिखा है; कि केवल दुर्जनों को देखकर ही स्थान छोड़ देना चाहिए। बिना देखे भाले ही क्या आप मुझे भी दुर्जन समझने लगी हैं?

कौतूहल भरी दृष्टि से सेवा ने कुमुद की ओर देखा। वह लम्बा और हृष्ट-पुष्ट युवक था। उसके अंग की गठन सुन्दर और मुख से सभ्यता के भाव झलकते थे।

उसकी आखों पर रोल्ड गोल्ड की कमानी का सुन्दर चशमा चमचमा रहा था; कुमुद की पोशाक बिल्कुल अंग्रेजी ढंग की थी—उसके मुख से एक गम्भीर मुस्कुराहट प्रकट हो रही थी, कुमुद की पोशाक में एक विशेषता थी, वह यह, कि बूटों की चमचमाहट चशमे की चमक को मात कर रही थी।

सेवा ने एक कुर्सी हीरक के पलंग के पास रखकर कहा-बैठिये।

ज़ोर से सिर हिलाकर कुमुद ने कहा—नहीं २ मैं कभी नहीं बैठ सकता। आप खड़ी रहें, और मैं बैठूं?

संकुचित होकर सेवा ने कहा—मैं भी बैठती हूँ। आप तो बैठिये।

कुमुद ने फिर कहा—नहीं २ जब तक आप खड़ी रहेंगी; मैं न बैठूँगा।

सेवा ने जो कुर्सी उसके लिए रखी थी, उसे एक ओर सेवा के लिए हटाकर, कुमुद ने, अपने बैठने के लिए दूसरी कुर्सी ले ली। सेवा लज्जित होकर चुपचाप बैठ गई। कुमुद भी हीरक के हाथ को अपने हाथ में लेकर कुर्सी पर बैठ गया। हीरक ने हँसकर पूछा—यह क्या कुमुद? तुम्हारी सारी बातें अचानक ही होती हैं। विलायत गये तो अचानक! लौटे तो अचानक?

और यहाँ आते ही अपनी भाभी से बातें करने लग गये; तो अचानक ? मैं तुम्हारा इतना पक्का मित्र हूँ, पर मुझ से तो कुछ भी बात न की। मैंने सोचा था, कि सेवा के साथ तुम्हारा परिचय कराते हुए कालिदास का यह श्लोक तुम्हें सुनाऊँगा।

"गृहिणी सचिवः सखीमिथः
प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ !!"

और सेवा को तुम्हारा परिचय देते हुए टैनिसन के यह वाक्य कहता कि "More than my brothers are to me !" तुमने तो मेरी सारी स्कीम पर ही पानी फेर दिया।

कुमुद ने हँसते २ कहा—अरे तुम दूसरे का परिचय देने वाले कौन ? भाभी तुम्हारी गृहिणी, सचिव, सखी और प्रिय शिष्या हैं; यह तो मैं जान चुका। और मैं तुम्हारा अभिन्न हृदय मित्र हूँ; यह जानना तुम उनकी बुद्धि पर ही छोड़ सकते थे। तुम्हें अपनी बुद्धि का बड़ा घमण्ड है। देखता हूँ; एकाएक हमसे बिना पूछे ही एक दूसरे का इस्टिमेट कर डाला।

कुमुद की इन व्यंगभरी बातों को सुनकर हीरक "हा ! हा " !! कर के हंसने लगा।

सेवा को बड़ी प्रसन्नता हुई। इसके कई कारण थे। पहले तो उसे बोध हुआ, मानों ग्रीष्म के प्रखर उत्ताप के बाद फिर वसन्ती दक्षिण हवा बह चली हो। हीरक जो ४-५ मास से विरक्त सा रहता था, आज कुमुद के आने से फिर प्रसन्न हो गया है। इतनी खुली हुई हँसी हीरक के मुख से सेवा ने आज ही सुनी थी। दूसरे, हीरक ने आज अपने मुँह से सेवा को अपनी गृहिणी, सचिव, सखी आदि कहा—अतः सेवा ने सोचा; कि हीरक मुझे अपनी पत्नी समझता है। तीसरे, दो मित्रों के परस्पर मिलन से और कुमुद की निष्कपट मित्रता पर वह

मुग्ध हो गई थी। चौथे कुमुद जैसे प्रफुल्ल एवं प्रियमित्र को पाकर हीरक के स्वस्थ होने में अधिक देर न लगेगी। ऐसी सेवा की आशा हो आई थी।

हीरक ने हँसते हुए पूछा—अच्छा—अब यह बताओ कुमुद! कि, तुम कब चले, कहाँ जा रहे हो, यहाँ कितने दिनों तक ठहरने का प्रोग्राम है।

कुमुद ने हँस कर कहा—ठहरो! ज़रा तुम्हारे इन प्रश्नों के उत्तर देने के पहले मैं कुछ खा लूँ। भाभी! बड़ी भूख लगी है, अन्नपूर्णा के भाण्डार से कुछ प्रसाद तो ला दो।

कुमुद को इतनी स्पष्ट तरह से माँगते हुए देख कर; सेवा को बहुत आश्चर्य; आनंद एवं लज्जा ज्ञात हुई। वह स्त्री होने से अन्नपूर्णा की स्वजाति है। और उस पर भी उस घर की स्वामिनी; उसीके आगे यह भिक्षा? सेवा जल्दी से बाहर चली गई।

सेवा के बाहर जाते ही हीरक को फिर अपनी वर्तमान परिस्थिति का ख़याल आया। उसने अपने चेहरे पर यथासाध्य दुःख की छाया डाल कर कहा—कुमुद! सारा हाल सुना है न? रमा और माँ दोनों ही मुझे छोड़ कर चली गईं। और मैं......।

कुमुद ने अपने हार्दिक दुःख को दबाकर कहा—हम और तुम भी कब तक जीयेंगे? सोचो तो? आज से ५० वर्ष पहले तुम कौन थे' कुछ बता सकते हो? इस दुनियाँ में थोड़े दिन का सुख भोगने के लिए आये हैं। सुख के लिए ही पूरा समय नहीं मिलता; फिर दुःख के लिए समय कहाँ से आयगा? जिस बात को सोचना चाहिये; उसे तो सोचते नहीं! अनहोनी बात की ओर ख़याल करके वृथा समय बिताते हो। जो कुछ है सो ही क्या कम है, अपना मन मत दुखाओ।

"रहेंगे नहीं बचे सभी, सभी सदा जीते।
आये हैं उसी भाँति चले जायँगे रीते॥
बचा सकेंगे नहीं सदा सभी अपने प्राण।
एक ही कवि, सदा गाता नहीं एक ही गान॥
माला जाती सूख सदा, अतः दुःख किसलिए ?
जो उसे पहिनते, वे भी हैं सदा नहीं जिए॥"

अब बात को फेरने की गर्ज़ से उसने कहा—अच्छा, तुम यह बताओ, कि क्या भाभी के और कोई छोटी बहिन हैं ?

हीरक का हृदय कुमुद की इन बातों से कुछ शान्त हो गया था। अचानक ही एक उद्देश्य रहित प्रश्न को सुनकर हीरक को बड़ा विस्मय हुआ। उसने हँसते २ पूछा—भाभी की बहिन से तुम्हे क्या गर्ज़ है ?

कुमुद ने उत्तर दिया—ब्याह करूँगा। मेरे साथ एक लड़की के विवाह की चर्चा चल रही थी, वह मर गई। अब ब्याह तो करना ही होगा। अगर इनकी कोई बहिन हो, तो फिर क्या ही कहना है ?

हीरक ने और भी चकित होकर कहा—मुझे तो पता नहीं। सेवा को, आने दो; अभी पूछ लेता हूँ। किन्तु तुम्हारा विवाह किसके साथ होने वाला था, और वह कब मरी ?

कुमुद ने मुस्कुरा कर कहा—दुनियाँ में नित्य प्रति कोई न कोई युवती मरा ही करती हैं। उनमें से किसी भी एक को समझ लो। वह मेरी हो भी न पाई, मैं उसके साथ वार्तालाप, भी न करपाया; कि वह मर गई—अब उसका क्या किया जाय ? उसके दुःख में अब अपने आनन्द के दीपक को बुझा कर तुम्हारी तरह इस जीवन को नष्ट करने की फिक्र तो नहीं कर सकता।

कुमुद के इस विशेष लक्ष्य लिये हुए व्यंग को न समझ कर भी हीरक हँसने लगा। इतने ही में सेवा कुछ मिठाइयाँ ले आई। हीरक की इस हँसी को सुनकर वह बड़ी प्रसन्न हुई। हीरक ने उससे पूछा—क्यों सेवा, तुम्हारी कोई छोटी बहिन है ?

चिहुँक कर सेवा ने पूछा—नहीं तो; क्यों ?

हीरक—होती तो; कुमुद शादी करता। तुम्हारी जैसी सुन्दरी स्त्री उसे पसंद है। सेवा का मुख लज्जा से लाल हो उठा। कुमुद भी अप्रतिभ हो गया। सेवा ने आगे आकर टेबिल पर तश्तरी रखते हुए कहा; लीजिये आप खाइये।

कुमुद ने कहा—भाभी ! मुझे "आप" न कहें। मैं आपका छोटा भाई हूँ, आप मेरी बड़ी बहिन हैं। हीरक ने अभी कहा ही था; कि मैं आपको देख कर बड़ा प्रसन्न हूँ। मुझे बड़ी खुशी हुई है।

हीरक के शब्दों से सेवा को कुछ दुःख हुआ था। कुमुद की इन बातों से वह भाव दूर होगया। सेवा ने मुस्कुरा कर कहा—अच्छा, तुम खाओ।

कुमुद खा ही रहा था, कि हीरक ने कहा—सेवा ! लोकनाथ दादा से कह कर ऊपर के कमरे में इनके रहने का प्रबंध करा दो। कुमुद ! जाओ, जाकर यह साहबी चोग़ा उतार आओ। बाग़ीचे में सैर करेंगे।

कुमुद ने मुख में के रसगुल्ले को, गले से नीचे उतार कर कहा—आज तो मैं नहीं ठहर सकता। मैं सीधा अपने घर ही जा रहा था। वहाँ से वापस लौटते हुए तुम्हारे पास ठहरने का विचार किया था। लेकिन स्टेशन पर आते ही तुम से मिलने के लिये चित घबराने लगा। यदि मैं आज

नहीं जाऊँगा, तो वे लोग वहाँ चिन्ता करेंगे। परसों तक लौट आ जाऊँगा।

यह सुन कर सेवा को कुछ दुःख हुआ। उसने सोचा था, कि कुमुद के रहने से हीरक शीघ्र ही स्वस्थ हो जायगा। कुमुद के जाने की बात सेवा को बहुत कष्ट प्रद जान पड़ी। म्लान मुख से उसने कहा—मैं जानती हूँ; कि आप विदेश से अभी वापस आ रहे हैं। आपके आत्मीय लोग आपसे मिलने के लिये बड़े उत्सुक होंगे। किन्तु तो भी आपसे अलग होने की इच्छा नहीं होती। क्या आप दो तीन दिन और नहीं ठहर सकते?

गम्भीर होकर कुमुद ने उत्तर दिया:—नहीं, भाभी, बहिन को पहले पत्र दे चुका हूँ, अगर न जाऊँगा; तो उसे चिन्ता होगी। जल्दी ही मैं वापस आ जाऊँगा।

सेवा को दुखित देख कर हीरक ने गम्भीर स्वर में कहा सेवा! ऐसा अनुरोध करना ठीक नहीं है, इतने दिनों बाद तो वापस आये हैं; अपने आत्मीय जनों से मिल आने दो।

कुमुद ने सोचा—हीरक नाराज़ हो गया है। अपने हाथ को हीरक के कंधे पर रखकर उसने कहा—नाराज़ क्यों होते हो, भाई? कल नहीं, परसों मैं अवश्य आ जाऊँगा। अब तो जाता हूँ; फिर देर करने से गाड़ी हाथ से निकल जायगी।

सेवा ने पूछा—वहाँ यह छः बजे की गाड़ी कब पहुँचेगी?

कुमुद—रात के ११ बजे।

सेवा—तो कुछ थोड़ा भोजन के लिए साथ लेते जाओ। वहाँ पहुँचने तक बहुत देर हो जायगी।

कुमुद—मेरे टिफ़न केरियर में कुछ रखा है, किन्तु इनकार नहीं करता। आप तो जान गई होंगी; कि मैं तो भुक्कड आदमी हूँ।

सेवा हँसते २ बाहर चली गई; हीरक चुपचाप पड़ा रहा। उसे समझाते हुए कुमुद ने कहा—नाराज़ न हो, भाई ! मैं वहाँ से वापस आकर कई दिन ठहरूँगा। इच्छा तो जाने को होती ही नहीं; पर......।

इतने ही में सेवा ने आकर पूछा—तुम्हारे साथ केवल एक बेग और टिफ़न केरियर ही है न?

कुछ सोच कर कुमुद ने कहा—हाँ !

सेवा—सामान गाड़ी में रखवा दिया है। गाड़ी तयार हो रही है।

कुमुद—मुझे गाड़ी की क्या जरूरत है ? पास ही स्टेशन है। सैर करता हुआ चला जाऊँगा।

सेवा—उससे क्या लाभ ? उतनी देर यहीं बातें करो।

कुमुद हँसने लगा। सेवा भी हँसी, किन्तु हीरक गम्भीर था। इतने ही में लोकनाथ ने ख़बर दी; कि मोटर तयार है।

हीरक के पास झुक कर कुमुद ने कहा—जाता हूँ; कल परसों तक वापस आ जाऊँगा।

हीरक चुप था ! कुमुद ने हीरक के सिर एवं कपाल पर हाथ फिरा कर अपने दुखी एवं क्रुद्ध मित्र को सान्त्वना दी। फिर सेवा को नमस्कार करके उसने कहा—जाता हूँ-भाभी !

सेवा ने मुस्कुराकर कहा—चलिए। मोटर तक पहुँचा आऊँ।

हीरक के कमरे के सामने ही से रास्ता था। सीढ़ियों से उतर कर वृक्षों से घिरे हुए सुन्दर रास्ते से आपस में बातें करते हुए दोनों चले। हीरक तकिये पर से सिर उठा कर उन्हें देखता रहा। बाग़ में आते ही सेवा ने कुमुद से पूछा—तुमने तुम्हारे मित्र की सारी दुःख कहानी सुनी है न ?

दीर्घ विश्वास लेते हुए कुमुद बोला—सुना है, भाभी ।

सेवा :—वे डाक्टर की भी औषधि नहीं लेना चाहते। कहते हैं; मैं अब नहीं बचूँगा। तुम डाक्टर हो। तुम्हारे साथ रहने से वे शीघ्र ही अच्छे हो जायँगे।

कुमुद:—अच्छा तो वह कभी का हो गया। पक्षाघात रोग में मानसिक व्यथा का आधिक्य होता है। "नहीं उठसकूँगा" यही सोचने से उसके अंग ढीले जान पडते हैं। और रात दिन पड़े रहने से अंगों में शिथिलता भी आ जाती है। अब की बार मैं आकर उसे अच्छा कर लूँगा। अभी उसमें लडकपन ज्यादा है। हमेशा से ही उसकी यही हालत रही है।

सेवा :—तुम जा रहे हो, इस लिये नाराज हो रहे हैं। तुम्हारी बहिन से मिल कर एक बार इधर अवश्य आना।

कुमुद और सेवा दोनों ने मुस्कुरा दिया।

बातें करते २ फाटक आ गया। कुमुद सेवा को सविनय प्रणाम करके मोटर में जा बैठा। मोटर देखते २ ही अदृश्य हो गई।

सोलहवाँ परिच्छेद ।

सेवा को वापस आते देख कर हीरक फिर सिर नीचे करके सो गया। सेवा ने हीरक के पास जा कर कहा—कुमुद है तो बड़ा मिलनसार व खुशमिजाज़। देखिये, एक ही घण्टे रहा—किन्तु अभी ही घर सूना मालूम होने लगा।

हीरक चुप रहा। सेवा ने पूछा—क्या आप बाग में चलेंगे?

हीरक फिर भी चुप था। हताश एवं व्यथित होकर सेवा चली गई।

हीरक के मन में एक प्रकार की जलन सी पैदा हुई। सेवा बचपन से अंग्रेज़ महिला के पास रही थी। बातचीत में संकोच करना, वह जानती ही न थी। कुमुद भी विलायत से वापस आया था, स्त्रियों के साथ बातचीत करने में उसे भी किसी प्रकार का संकोच न होता था। किन्तु हीरक को इस प्रकार के खुले व्यवहार पसन्द न थे, इतने दिन तक वह सेवा को अपनी स्त्री नहीं मानता था। और प्रायः उससे अलग रहने ही की चेष्टा करता था, किन्तु आज एक दूसरे व्यक्ति के सामने आ जाने से हीरक मज़बूरन सेवा से स्त्री की तरह व्यवहार करने को लाचार था; लेकिन कुमुद और सेवा की बातचीत से हीरक के मनमें रह रह कर शंकाएँ पैदा होने लगीं। उसने सोचा; कि कुमुद एक स्वस्थ, सुंदर, प्रफुल्ल, एवं वाक्पटु युवक है; और मैं पक्षाघात रोग के कारण मरणासन्न हो रहा हूँ, मेरे सब अवयव शिथिल होगये हैं, मुझमें कुछ शक्ति नहीं है, ऐसी अवस्था में यदि सेवा, मुझसे अधिक कुमुद को प्यार करने लगे; तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? कुमुद ने साफ़ कहा था, कि अगर सेवा की कोई बहिन होती, (अर्थात् सेवा!) तो उससे वह शादी कर लेता। सेवा भी उसके जाते समय दुखित होगई थी। सेवा एवं कुमुद की बातचीत में वह इसी प्रकार के अन्य वाक्यों को ढूँढने लगा। उनकी बातचीत के प्रत्येक शब्द में न जाने क्या टटोलने लगा। उसने सोचा कि सेवा मुझसे अब पहले की तरह खुलकर बातचीत भी नहीं करती, किन्तु कुमुद से तो उसने कितनी ही बातें कीं। आध घण्टे ही में वह कुमुद को "तुम" कहने लगी; किन्तु मुझे पति मानते हुए भी आज तक "आप" ही कहती आ रही है। सेवा अब तो मेरे पास अधिक देर तक ठहरती भी नहीं, किन्तु

कुमुद से बातें करते २ उसके साथ फाटक तक चली गई। हीरक इस तरह की बातें मन में सोचकर अकारण ही जलने लगा। उसने यह न सोचा कि; वह स्वयं ही सेवा से मिलना नहीं चाहता, उससे प्रसन्न होकर बात भी नहीं करता, इसीसे वह हीरक से खुलकर बातें नहीं कर सकती थी। हीरक स्वयमेव सेवा को "तुम" कहता था; किन्तु सेवा से कभी उसने "तुम" कहलाने का अनुरोध नहीं किया। इसमें सेवा का क्या दोष ? हीरक अपने आचरणों के दोषों को सेवा के गले मँढ कर और भी अशान्त व दुखी होने लगा। सेवा के ऊपर मेरा पूरा २ अधिकार है। सेवा का प्रेम केवल हीरक ही के लिए है, आज इतने दिनों के बाद हीरक के ख़याल में यह बात आई। सेवा के हृदय पर कब्जा जमाने के लिए वह व्यग्र एवं उत्सुक हो उठा।

सत्रहवाँ परिच्छेद ।

फूल शय्या !

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम् ।
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः ॥
इत्थं विचिन्त्यमगकोषगते द्विरेफे ।
हा हन्त, हन्त, नलिनी गजमुज्जहार !!

पंद्रहवें परिच्छेद में हीरक को कुमुद का नाम सुनते ही जितनी प्रसन्नता हुई थी, उससे भी अधिक उसे "अब फिर आयगा" यह जानकर दुःख हुआ। वह परमेश्वर से प्रार्थना करने लगा, कि या तो उसकी बहिन ही उसे न आने दे, या बीच

में ही उसे किसी नौकरी पर चला जाना पड़े। इसी सोच-विचार में उसने सारी रात बिता दी।

दूसरे दिन प्रातः काल जब सेवा हमेशा की तरह माथा नीचा करके हीरक के जलपान का इन्तजाम कर रही थी, तब उसने अकस्मात् उसका हाथ पकड़ कर कहा—सेवा! सेवा! मुझे नीरोग कर दो।

कुछ चकित सी होकर सेवा ने कहा—आप तो अच्छे हो गये। केवल आप उठते नहीं, इसीसे कुछ कमज़ोरी है।

कातरभाव से हीरक ने पूछा—मेरे अच्छे होजाने पर तुम कहीं चली तो नहीं जाओगी?

मुस्कुराकर सेवा ने कहा—मैं आपको छोड़कर आपकी इच्छा के विरुद्ध कहाँ जा सकती हूँ?

इस उत्तर से कुछ खिन्न होकर हीरक ने कहा—क्यों नहीं जा सकतीं? तुम्हें अपनी इच्छा पर पूरा २ अधिकार है।

सेवा ने कहा—नहीं, मैं माँ के सामने प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ।

हीरक ने सेवा का हाथ छोड़ दिया। सेवा अवाक् हो रही। कातरदृष्टि से एकबार हीरक की ओर देखकर वह फिर अपने काम में लग गई।

चंचल हृदय हीरक अभिमान से फूल गया। सेवा माँ के पास प्रतिज्ञा कर चुकी है, इसी लिए नहीं जाती। सेवा वास्तव में, हीरक से प्रेम नहीं करती। सहस्रों बिच्छू मानों हीरक को काटने लगे। सेवा को काबू में लाने के लिए वह क्या प्रयत्न करे, यह सोचने लगा।

सेवा हज़ारों यत्न करके भी यह न जान सकी; कि आज कल हीरक के भावों की प्रवृत्ति किस ओर है। वह एक स्त्री है।

स्त्रियाँ दूसरे के दुःख से व्यथित होकर उनकी सेवा कर सकती हैं। वे जिससे प्रेम करती हैं, उसके लिए अनायास ही अपने प्राण तक दे डालती हैं। किन्तु वे आगे होकर यह नहीं कह सकतीं कि "मैं तुम से प्रेम करती हूँ"। वे प्रेम याचना खुद आगे होकर नहीं कर सकतीं, जब तक कि वे अपने प्रेमी के हृदय का पूरा २ पता न पा लेती हों। सेवा को भी इसीलिए, हीरक के अस्पष्ट प्रश्न का अस्पष्ट ही उत्तर देना पड़ा। इधर हीरक भी सेवा से स्पष्टतया पूछ बैठने का साहस न करता था। उसे भय था, कि कहीं उसके स्पष्ट प्रश्न को सेवा "ना" के आघात से वापस न लौटा दे। तब भी हीरक सेवा से हाँ, या नाँ का स्पष्ट उत्तर सुनने के लिए आतुर हो गया। क्योंकि न जाने कुमुद कब लौट आवे। उसके प्रश्न का उत्तर जो आज "हाँ" भी हो सकता है, कुमुद के आ जाने पर "नाँ" में बदल जायगा। सेवा कुमुद के आने की आतुर होकर प्रतीक्षा कर रही थी।

अनेक दिनों बाद आज हीरक ने सारे दिन भर सेवा को बुलाकर अपने पास बैठाया। अगर सेवा किसी कार्यवशात् बाहर जाती, तो वह उत्सुक एवं व्यग्र होकर "सेवा-सेवा" चिल्लाने लगता, या लोकनाथ को कहता—लोकदादा! देख तो, तेरी बहूरानी क्या कर रही है! रुग्ण बालक की तरह वह एक क्षण के लिए भी सेवा को आखों से ओझल न होने देता था। क्योंकि कुमुद के आने के पहले ही उसे सेवा पर काबू कर लेना था। आज फिर सेवा, पहले की भाँति पुस्तक सुनाकर या गा बजाकर हीरक को सन्तुष्ट करने लगी।

मैनेजर वगैरह अगर आज महिला विद्यालय की और जमींदारी की व्यवस्था करने के लिए सेवा से परामर्श

करने आते, तो हीरक चिल्लाकर उत्तर देता—छोटे २ कामों के लिए भी "बहूरानी बहूरानी" पुकार रहे हैं। अगर बहूरानी ही सारे काम करेंगी; तो तुम किस लिए हो ? जा मैनेजर बाबू से कह दे; कि बहूरानी को फुरसत नहीं है। सेवा यदि कहती कि जाऊँ, सुन आऊँ, देखूँ, मैनेजर बाबू क्या कहते हैं ? तो मुँह फुलाकर हीरक कहता कि, क्या मेरे पास बैठना बुरा लगता है ? इसलिए सेवा भी कहीं न जा सकती थी। आज हीरक की प्रकृति में इस तरह परिवर्तन देख सेवा बड़ी प्रसन्न हुई। सेवा की प्रसन्नता का अन्त न था। सेवा का पहले किसी भी पुरुष के साथ इस प्रकार का सम्पर्क नहीं था। उसका सम्पर्क एक मात्र हीरक से ही था। हीरक से वह विशुद्ध प्रेम करती थी। आज हीरक से उस प्रेम का प्रतिदान पाकर सेवा का हृदय खिल गया। एवं इस परम लाभ के लिए वह मन ही मन कुमुद की कृतज्ञ हुई। मेरे भाग्य ही से कुमुद आया था; उसके आते ही हीरक की प्रकृति ठीक रास्ते पर आ गई।

सेवा उत्कंठित होकर कुमुद के आने की बाट जोहने लगी। शाम की गाड़ी के चले जाने का समय हो गया; तब सेवा ने कहा—शायद इस ट्रेन से कुमुद अवश्य आ।गये होंगे। गाड़ी भेजनी चाहिए थी।

समवयस्क युवकों की मण्डली में उनके किसी पूज्य परिचित, या किसी वृद्ध के अचानक आजाने से जिस प्रकार उन का आनन्द कोलाहल शान्त हो जाता है, वैसे ही सारे दिन परिश्रम करने पर शाम को सेवा के मुख से कुमुद का नाम सुनकर हीरक निराश हो गया। उसने गम्भीर होकर कहा—कुमुद तुम्हारे जैसा पागल थोड़े ही है, कि इतने बाद तो बहिन से मिलने गया, और आज ही वापस आ जायगा। सेवा !

कुमुद तुम को बड़ा अच्छा लगा है ? सेवा ने इस जाल लपेटी बात पर कुछ भी ध्यान न देकर सरलभाव से कहा—लगेगा क्यों नहीं ? आपही ने तो कहा था—"More than my brothers are to me !"

हीरक और भी गम्भीर हो गया, किन्तु जैसे २ वह समझता था, कि सेवा उच्छृंखल होती जा रही है, वैसे ही उसे शृंखला बद्ध करने के लिए वह उत्सुक एवं व्यग्र होने लगा। हीरक ने देखा; कि जिस प्रकार बादल हवा पर सवार होकर थोड़ी देर ही में सारे आकाश को घेर लेते हैं, ठीक उसी तरह एक प्रकार की उन्मत्तता एवं आवेग ने उसके हृदय को अंधकार मय बना दिया है। हीरक ने सेवा के हाथ को पकड़ कर उसे अपनी ओर खेंचते हुए कहा—सेवा! मैं तुमको बहुत दिन से "तुम" कहता हूँ, पर क्या मैं तुम्हारे लिए हमेशा ही "आप" बना रहूँगा। तुम कुमुद को तो आध ही घण्टे में "तुम" शब्द से सम्बोधन करने लगी।

सेवा ने मुस्कुरा दिया; और मृदुस्वर से उसने कहा—वे तो इसके लिए पीछे ही पड़ गये; अतः बोलना ही पड़ा।

क्षुब्ध होकर अभिमान भरे स्वर से हीरक ने कहा—हमारा तुम्हारा कैसा घनिष्ठ सम्बन्ध है। सेवा! आदर मान की घर में क्या आवश्यकता ? तुम्हारा जो मेरे साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है, उसे तुम "आप" कह कर ढीला मत करो।

सेवा ने अपनी भूल को स्वीकार करते हुए कहा—चलो, थोड़ी देर बाग ही में घूम आवें। आज कई किस्म के नये फूल खिले हैं, तुम्हें आज बागीचे की विचित्र शोभा दिखलाऊँगी।

सहज ही सेवा के मुख से "तुम" शब्द सुन कर हीरक का

सारा क्षोभ जाता रहा। हँसकर उसने कहा, चलो—इस भारी बोझे को भी ले चलो।

सेवा ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया—अगर मैं इसे भारी बोझा समझती, तो सिर पर ही क्यों उठाती?

सेवा के मुख से प्रणय का किञ्चित् मात्र आभास पाकर ही हीरक अपने आप को कृतार्थ समझने लगा। उसने कहा—मैं अब अधिक दिन तुम्हारे लिए बोझा न बना रहूँगा। मैं शीघ्र ही अच्छा हो जाऊँगा। तुम मुझे पकड़ो, मैं खुद उठ सकता हूँ कि नहीं। देखूँ तो सही।

सेवा प्रसन्न होकर पहियेदार आराम कुर्सी ले आई और उसे हीरक के पलंग के पास रख दिया। सेवा ने बड़े कष्ट से उठा कर उसे गाड़ी में बिठलाया। इस परिश्रम से क्लान्त होकर वह हाँपने लगी; और इस खेंचातानी से हीरक भी हाँपने लगा। किन्तु दोनों ही अपनी २ इच्छा पूर्त्ति के आनन्द से एक दूसरे का मुख देख कर हँसने लगे। सेवा हाँपती हुई उस गाड़ी को बग़ीचे में ले चली।

बाग़ में आकर हीरक ने देखा, कि क्यारियों में कई रंग के बीसियों गुलाब के फूल खिले हुए हैं। तरह २ के पुष्प वृक्षों एवं लताओं से वह बागीचा उन्हें इतना सुन्दर मालूम होता था, मानों किसी निपुण चित्रकार के हाथ का चित्र हो। देखते देखते हीरक का मन उत्तरोत्तर प्रसन्न होता जाता था, मारे प्रसन्नता के मस्त होकर हीरक एकाएक गाने लगा।

"नई उमंगें, नई तरंगें; हरी हुई आशाएँ मन में।
वृक्षवृक्ष में नूतन पल्लव, प्रेमभाव जन मन में॥
फागुन छायो बन २ में॥"

उसके गाने में बाधा देकर सेवा ने प्रसन्नता से कहा—देखो २ कुमुद आ गये ।

हीरक की नयी उमंगें, नयी तरंगें, आशाएँ सब व्यर्थ हुईं । वह चौंक पड़ा । आसपास के सारेवृक्ष, पुष्प आदि मानों एक साथ चिल्ला उठेः—देखो, देखो; कुमुद आ गये ।

सिर उठा कर हीरक ने देखा, कि वास्तव में कुमुद आ रहा है । हीरक का चेहरा क्रोध से, भय से, ईर्ष्या से, एवं निराशा से पीला हो गया ।

हीरक को बागीचे में आया हुआ देख कर कुमुद बड़ा प्रसन्न हुआ । उसे इतनी जल्दी लौट आया देख कर सेवा भी बड़ी खुश हुई । इसी लिए दोनों ने ही हीरक की ओर ध्यान न दिया । आते ही कुमुद ने पहले की भाँति शिष्टाचार दिखाते हुए अपनी भाभी को प्रणाम किया, फिर हीरक के कंधे पर हाथ रख कर कुमुद ने कहा—रोज़ सुबहो शाम इस प्रकार टहलने से तुम्हारी सारी दुर्बलता जाती रहेगी । मैं अभी यहाँ १५ दिन तक रहूँगा । जिस दिन जाऊँगा, तुम्हें मेरे साथ स्टेशन तक पैदल चलना होगा ।

हीरक के मुख का पानी सूख गया; उसने मन ही मन कहा; बापरे; बाप ! यह तो न मालूम क्या चौपट कर डालेगा फिर प्रगट में हीरक से बोला—पन्द्रह दिन ! बहिन के यहाँ एक ही दिन झाँकी दिखाकर वापस आ गये, और अब यहाँ पंद्रह दिन तक अड्डा जमाने से तुम्हारा क्या मतलब है ?

कुमुद की बहिन हीरक को अच्छी तरह से जानती थी । तुम्हारी अवस्था ऐसी विकट देख कर बहिन, मुझको आते हुए न रोक सकी । यह न कह कर कुमुद ने कहा—नई

बहिन के प्रेम के आगे पुरानी बहिन के प्रेम बंधन ढीले हो गये हैं। यही कारण है; कि वह मुझे न रोक सकी।

सेवा हँसने लगी; और कुमुद भी हँसने लगा। दोनों को इस तरह निःसँकोच हँसते देख कर हीरक जलभुन कर ख़ाक हो गया।

हीरक की गाड़ी के पीछे जाकर कुमुद ने सेवा से कहा—आप छोड़ दीजिए ? मैं ले चलता हूँ।

सेवा हट गई। और गाड़ी को बायें हाथ से पकड़े हुए वह धीरे धीरे चलने लगी। घूमते घूमते सेवा और कुमुद तरह २ की बातें करने लगे। रह रह कर वे हँस देते थे। हीरक का सारा धैर्य जाता रहा। भगवान् ने मनुष्य के पीछे की ओर आँखें न देकर मनुष्य को कितनी असुविधा में डाल दिया है, यह हीरक ने अनुभव किया। सेवा और कुमुद गाड़ी के पीछे २ चल रहे थे। हीरक उनके संकेतों वगैरह को देख नहीं सकता था। दोनों के इस व्यवहार को देख हीरक घबरा उठा।

कुछ दूर जाकर उसने कहा—अब मुझे अधिक फिरना अच्छा नहीं लगता।

कुमुद बोला—अच्छा चलो। कहीं चलकर बैठेंगे। कुमुद गाड़ी को खींचकर एक बेञ्च के पास ले गया और बोला—बैठिये, भाभी ! हीरक की गाड़ी को छोड़कर सेवा और कुमुद बेञ्च पर बैठ गये। जहाँ पर वे लोग बैठे थे, बागीचा खतम हो चुका था। सामने केवल खेत ही खेत नज़र आते थे। कृषक लोग खेती के काम में लगे हुए थे। यह देखकर सेवा बोली—यह ज़मीन किसानों की है। ये लोग इस जगह बाग़ीचा क्यों नहीं बनवाते ? मैं होती; तो बाग़ीचा ही बनवाती।

कुमुद बोला—तो आप भँवरा या तितली होतीं, तो अच्छा

होता। मधुपान करने ही से मनुष्यों का पेट नहीं भरता। किसानों के लिए ये खेत ही बाग़ से बढ़कर हैं। आपके इस बाग में बड़ी सावधानी से बीज लगाने पर भी कई क्यारियों में कुछ पेड़ लगते हैं। किन्तु उनके यहाँ तो अपने आप ही पैदा होते हैं। आपमें और उनमें बड़ा भेद है। आप तो फूल पाकर ही खुश हैं—मा फलेषु कदाचन। और उनका काम "कर्मण्येवाधिकारस्ते" केवल अपने परिश्रम का बदला प्राप्त करना ही है। सभी अगर आपकी तरह "कवि" होते, तो दुनियाँ में रहना मुश्किल हो जाता।

कुमुद एवं सेवा को इस तरह निःशंक होकर बातें करते हुए देख हीरक जल भुन कर मन ही मन ख़ाक हो रहा था। अब उनकी सब बातें उसे असह्य मालूम होने लगीं। एकाएक हीरक की दृष्टि कुमुद के डंडे पर पड़ी। जो ज़मीन पर पड़ा था; वह झुककर उसे उठाने की चेष्टा करने लगा; किन्तु इतना झुक नहीं सकता था। सेवा उसे उठाकर देने ही वाली थी, कि कुमुद ने अपने हाथ से उसके हाथ को रोक लिया, और उसे डंडा न उठाने का संकेत किया। हीरक उसे उठाने का भरसक प्रयत्न करने लगा। हीरक ने देखा—सेवा के हाथ पर हाथ रखकर कुमुद ने कुछ इशारा किया। सेवा भी हँसी, कुमुद भी हँसा। मारे क्रोध के हीरक के अंग अंग थरथराने लगे। जोश में आकर उसने एकदम कमर को झुकाकर डंडा उठा लिया। और उस डंडे को ज़मीन पर मार मार कर वह अपनी पीठ से उस गाड़ी को ठेलने लगा। सेवा गाड़ी चलाने के लिये उठने लगी, किन्तु कुमुद ने कहा—नहीं, नहीं, आप न उठें। उसे ही हाथ पैर हिलाने दो; जिससे उसकी ताक़त बढ़ेगी।

कुछ डर कर सेवा बोली—देखिये, वे नाराज़ होकर चले जा रहे हैं।

कुमुद ने कहा—जाने दो, वह तो बात की बात में इसी भाँति नाराज एवं खुशी हो जाया करता है। संकल्प बल (Will force) के लिये उत्तेजना की भी आवश्यकता है। इस क्रोध व उत्तेजना से उसकी इच्छाशक्ति वापस आ गई; तो बड़ा अच्छा होगा, वह और भी जल्दी अच्छा हो जावेगा।

यह सुनकर सेवा चुपचाप बैठ गयी। प्रेम से मुग्ध, अतृप्त एवं आकुल दृष्टि से वह हीरक को देखती रही।

कुछ दूर जाकर हीरक ने मुँह फिराकर पीछे देखा, कि सेवा और कुमुद हँस रहे हैं। हीरक की उन्हें कुछ भी पर्वाह नहीं। वह और भी उत्तेजित हो गया। अपने क्रोध को वह लकड़ी पर आज़माने लगा। बड़े जोरों से वह उसे ज़मीन पर मारते हुए गाड़ी को ठेलने लगा।

मकान के पास पहुँचकर अभिमान भरे स्वर से हीरक ने पुकारा—कोई है क्या?

जल्दी से लोकनाथ भागता हुआ आया। उसने देखा; कि हीरक अकेला ही गाड़ी को ठेल २ कर ला रहा है। इस परिश्रम से व क्रोध से वह ज़ोर ज़ोर से हांप रहा था; और उसका ललाट पसीने से तर हो रहा था। लोकनाथ के आते ही वह डंडा उस पर फेंक कर रोते २ बोला—तुम लोग सब कहाँ रहते हो। लोकदादा! अगर माँ होती; तो तुम लोगों की क्या हिम्मत थी, कि इस प्रकार मेरी ख़बर भी न लेते?

इतना कहकर मारे क्रोध के हीरक फूट फूट कर रोने लगा।

वृद्ध लोकनाथ कुछ न बोला—चुपचाप गाड़ी को ठेल कर कमरे में ले आया। वहाँ जाकर उसने हीरक का पसीना पोंछ

दिया, और कपड़े बदला कर उसे बिछौने पर लिटा दिया। हीरक बोला—बड़ी प्यास लगी है, लोकनाथ दादा। लोकनाथ दौड़ कर एक काँच के गिलास में नींबू का शरबत ले आया। एक सांस में ही हीरक उसे पी गया। मारे दुःख के लेटते ही हीरक को नींद आ गई।

कुछ देर बाद सेवा और कुमुद ने आकर देखा, कि हीरक सो गया है, और लोकनाथ पास बैठा हुआ पंखा डुला रहा है।

सेवा ने पूछा—लोकदादा ! ये सो गये क्या ?

लोकनाथ भी सेवा पर कुछ नाराज़ हो गया था। अगर सेवा हीरक की भलीभांति शुश्रूषा नहीं कर सकती, तो वह उससे स्पष्ट क्यों नहीं कह देती ? उसने हीरक को इतना बड़ा किया और जब तक हीरक ज़िन्दा रहेगा, वह उसको देख कर ही प्रसन्न रहेगा। आज अकेला हीरक गाड़ी खेंचता हुआ चला आया, सेवा और कुमुद ने उसकी पर्वाह तक न की। इसका क्या अर्थ ? हीरक इतना क्रोधित क्यों हो रहा था ? जो सन्देह हीरक ने सेवा पर किया था, वही सन्देह लोकनाथ को भी हुआ। उसके प्रश्न के उत्तर में इसीलिए उसने सिर हिला कर कह दियाः—हाँ !

सेवा ने धीरे २ कहा—मैं यहाँ बैठती हूँ, तुम जाकर इनके लिए सब इन्तज़ाम करो। हीरक की ओर इशारा करके—इनके उठने पर इन्हें भोजन कराऊँगी। लोकनाथ के साथ २ कुमुद चला गया।

रात्रि के दस बज गये परन्तु हीरक सोता ही रहा। सेवा ने लोकनाथ को बुलाकर कहा—लोकनाथ दादा ! तुम इनके पास बैठो। मैं नाना जी और कुमुद को भोजन करा आऊँ। इनके उठते ही मुझे बुला लेना। यह कह कर सेवा चली गई।

आनन्द बाबू और कुमुद को भोजन करा दास दासियों के खाने पीने की व्यवस्था कर हीरक के पीने के लिए गर्म्म जल लेकर जब सेवा वापस आई, तब रात्रि के ११ बज चुके थे। टेबिल पर हीरक के लिए भोजन रखते हुए सेवा ने कहा—लोकनाथ दादा, जाओ, तुम भी भोजन करो। और यहाँ दूध गरम करने की व्यवस्था कर जाना। मुझे अभी दूध गर्म करना होगा।

लोकनाथ ने पूछा—क्या, आपने भोजन कर लिया ?

सेवा ने कहा—नहीं, इनका तो भोजन हुआ ही नहीं। मेरे लिए भोजन रख देने को कह आई हूँ।

लोकनाथ के सारे सन्देह दूर हो गये। पर वह कुछ भी न समझ सका; कि यह गोरख धंधा क्या है ?

भोजन करके लोकनाथ ने वापस आकर देखा—हीरक तब भी सो रहा था। सेवा बड़े स्नेह से उसके तकिये पर अपनी कोहनी टिकाकर उसके कपाल पर हाथ फिरा रही थी। लोकनाथ ने कमरे में आकर कहा—बहूरानी! रात के बारह बज चुके हैं।

धीरे २ सेवा बोली—जाओ, जाकर सोओ—आवश्यकता होगी; तो तुम्हें जगा लूँगी।

उत्कंठित होकर लोकनाथ ने पूछा—और आप ?

सेवा ने कहा—इन्हें भोजन कराये बिना मुझे चैन कहाँ ?

लोकनाथ ने मुस्कुरा दिया। कमरे के बाहर एक ओर अपना बिछौना बिछाकर सोते हुए चादरा ओढ़कर लोकनाथ ने पुकारा—हरि हे।

इस "हरि हे" में कई प्रार्थनाएँ सम्मिलित थीं। कुछ ही देर में वह सो गया।

हीरक की जब निद्रा खुली तब रात की १ बज चुकी थी उसने देखा, कि सेवा सिरहाने बैठी है। हीरक उठ बैठा, और बोला—कमरे में और कौन है?

सेवा बोली—कोई नहीं; रात बहुत बीत चुकी है।

इतनी रात तक सेवा उसके जगने की इन्तजार में बैठी हुई थी; इस पर ध्यान न देकर हीरक बोला—मैं तुम से अकेले में कुछ बातें करना चाहता ही था देखो, मैं जानता हूँ कि मैं मैं बीमार हूँ; मुझ जैसे रोगी से तुम प्रेम नहीं कर सकती। तुम्हारे साथ मेरा विवाह हुआ है, इसलिए तुम मुझे छोड़ कर और किसी से प्रेम नहीं करोगी, यह सोचूँ तो मैं बड़ा मूर्ख हूँ। जब कि तुम मुझे नहीं चाहती, और न मैं ही तुम्हे चाहता हूँ; ऐसी अवस्था में हम दोनों का अलग रहना ही उचित है। हम लोगों का विवाह के नाम से जो एक अनुष्ठान हुआ था; वह समाज से; आईने से, धर्म से, किसी भी तरह विवाह नहीं माना जा सकता। उस समय मेरी हालत ख़राब थी; मैं पक्षाघात रोग ग्रस्त था, और मंत्र भी पूरे नहीं पढ़े गये थे; उसपर भी तुम्हारी और हमारी जाति भी अलग २ है। केवल विवाह हो जाने से ही स्त्री पुरुष एक दूसरे पर प्रेम नहीं कर सकते; प्रयुत कई बार देखा जाता है; कि विवाह न होते हुए भी दो व्यक्ति एक दूसरे को बहुत चाहते हैं। हाँ विवाह संस्कार हो जाने से पुरुष का स्त्री पर कुछ अधिकार हो जाता है। प्रेम न करने पर भी अगर उसके अधिकार में कुछ दख़लदाज़ी होती है; तो उसे बुरा जान पड़ता है। मुझे भी उसी प्रकार का दुःख है। दुहाई तुम्हारी! मेरे ही यहाँ रहकर तुम मेरे अधिकारों की हँसी मत उड़ाओ। मेरे ऊपर दया करो, कृपा करो। मुझे छोड़ कर जहाँ तुम्हारी इच्छा हो; चली जाओ। इस

टेबिल के दराज़ में मेरी ज़मींदारी का दान पत्र है। उसे इधर ले आओ।

सेवा थर थर काँपती हुई, खड़ी खड़ी हीरक की बातें सुन रही थी, वह अभी तक न जान पाई थी; कि आज हीरक उसके ऊपर इतना क्रुद्ध किस लिये है। काँपते हुए उसने टेबिल की दराज़ में से दान पत्र निकाल कर हीरक के हाथ में दे दिया।

उसको लेकर हीरक कहने लगा—मेरी यह ज़मींदारी ही मेरे नाश का एक मात्र कारण है। तुमने पुष्पोद्यान की प्राप्ति के लालच में आकर ही मुझसे विवाह किया था, और इसी के लोभ के कारण तुम मुझसे प्यार न करते हुए भी मुझे छोड़ कर नहीं जा सकती। कल ही मैं सारी जमींदारी तुम्हारे नाम से लिखदूँगा। तुम दया करके मुझे छोड़ दो। मेरे ही सामने रह कर मेरा उपहास मत कराओ! मुझे दुख मत दो? मैं रिहाई चाहता हूँ! रिहाई चाहता हूँ!!

अन्तिम वाक्यों को बड़ी तीव्रता से कह कर हीरक ने उस दानपत्र के टुकड़े करके; सेवा पर फेंकते हुए कहा—मेरी जमींदारी को हड़प कर जाने के लिए ही यह सब तुम्हारी चालाकियाँ थीं। कल प्रातःकाल प्रकट रूप से मैं सारी जमींदारी तुम्हारे नाम लिखदूँगा। जिससे तुम प्यार करती हो, उसे लेकर आनन्द से पुष्पोद्यान में रहो। लेकिन मुझे मत जलाओ।

इस मिथ्या अपमान एवं तिरस्कार से सेवा मारे दुःख के बेहोश सी हो गई। क्रोध और दुःख से उसका चेहरा लाल हो गया; वह चुपचाप उठकर बड़ी तेज़ी से बाहर सीढ़ियों से नीचे उतर कर बगीचे में चली गई।

बगीचे में जाकर सेवा खूब फूट फूट कर रोने लगी; और बार बार अपने आपको धिक्कारने लगी। प्रकृति देवी की शांति

मयी निद्रा में, उस समय केवल सेवा का फूट फूटकर रोना ही बाधा डालता था। उधर हीरक को किसी के रोने की आवाज़ सुनाई दी; वह चौकन्ना होकर बागीचे की तरफ देखने लगा।

उसी समय हीरक को दबे पाँव किसी के सीढ़ियों से नीचे उतरने की आवाज़ सुनाई दी। हीरक ने सोचा—कुमुद के अलावा और कौन हो सकता है?

हीरक ने सारे सम्पर्कों को विच्छिन्न करके अपने पास से जिस सेवा को विदा सा कर दिया था, गम्भीर रात्रि में उसी सेवा के पास; चोर की तरह दबे पाँव कुमुद को जाते हुए सोचकर उसका खून खौलने लगा। वह चञ्चल हो उठा। कुछ देर तक वह बिछौने पर छटपटाता रहा; फिर उठकर बैठ गया। इतने में, दो व्यक्तियों के बातचीत की धीमी धीमी आवाज़ उसके कानों में पड़ी। हीरक की अशक्तता जाती रही, वह उत्तेजित होकर पलंग से उतर पड़ा।

खिसकता खिसकता बहुत कठिनाई से सीढ़ियें उतर कर हीरक, बाहर दालान में आ गया। और उनकी बातें सुनने के इरादे से छिपकर एक कोने में दीवार के सहारे खड़ा हो गया। खड़े होकर उसने देखा—शुभ्रज्योत्स्ना में सारा उद्यान मुस्कुरा रहा है। ऐसा जान पड़ता है, कि मानों बसन्त लक्ष्मी क्षीर सागर से सुधा की झारियाँ भर २ कर उस उद्यान को सींच रही हो! उस मनोहर उद्यान की गोद में सीढ़ियों से नीचे एक ओर बैठकर दोनों हाथों से मुँह ढाँके हुए सेवा, फूट फूट कर रो रही है; पास ही आनंद बाबू बैठे हुए उसे सांत्वना दे रहे हैं। नानाजी! आप मुझे इस पुष्पोद्यान का लोभ बताकर यहाँ क्यों ले आये? उनकी प्रकृति को न जानते हुए, आपने उनके साथ मेरा विवाह क्यों कर वा

दिया ? मेरा तो तन, मन, धन सब वही हैं; आज तक मैंने अपना कर्तव्य समझ; उनकी सेवा में किसी तरह की कसर न रक्खी। मैं हमेशा इस बात की कोशिश करती रही; कि किस तरह से उनका मन प्रसन्न हो; मेरी आँखें उनको स्वस्थ देखने के लिये सदैव अतृप्त रहती हैं। लेकिन न मालूम क्यों, उनका हृदय मेरी तरफ से विरक्त होता जाता है; हँसते हँसते बात करते हुए एकदम उदास हो जाते हैं; और गम्भीर चिंता में मग्न हो जाते हैं। इधर पाँच महीने से तो मुझसे हँसकर बोलना ही उन्हें दुरूह मालूम होता है। आज अभी२ वे मुझसे कहने लगे; तुम यहाँ से चली जाओ! मेरे ऊपर कृपा करो! मेरे ही सामने मेरी हँसी मत उड़ाओ!! तुम्हारा यह सब षड़यंत्र मेरी ज़मींदारी के हड़प करने ही के लिये था, कल ही मेरी सब ज़मींदारी तुम्हारे नाम लिख दूँगा, और कृपा कर मेरा पीछा छोड़ दो; और जहाँ तुम्हारी इच्छा हो, वहाँ चली जाओ।

नानाजी! मुझे अभी तक इस बात का खयाल भी नहीं था; कि वे मेरे विषय में इस तरह की शंकाएँ करेंगे, आप भी यहीं रहते हैं, आप भी खुद जानते हैं, कि उनकी ज़मींदारी के लिये मैंने कौनसा षड़यंत्र रचा। उनके मन को प्रसन्न करने के लिये ही आपकी अनुमति से; मैंने उनसे सुमति-कन्या-विद्यालय के खोलने का आग्रह किया था। मैं उन्हें छोड़कर अकेली कहाँ जाऊँ? उनके सिवाय मेरे और है ही कौन? वे कहते हैं, तुम्हारा और हमारा विवाह के नाम से जो एक अनुष्ठान हुआ था, वह समाज से, आईन से, और धर्म से विवाह नहीं माना जा सकता। नानाजी! आपने मेरे हृदय में यह विवाह कुसुम खिला कर अच्छा नहीं किया! एक हिन्दू रमणी होने

से उनके सिवाय मेरे लिये सभी अंधकार है। मेरे तो आराध्य देवता केवल वही हैं! यदि वे मुझे परित्यक्त करेंगे, तो मैं प्रसन्नता से उसकी आज्ञा का पालन करूंगी। और प्रकृति के शांति मय साम्राज्य में हिमालय में विचरण करती हुई उनके गुण गाऊँगी। पुष्प वाटिकाओं की वहाँ मेरे लिये कमी नहीं......

यह कहते २ सेवा का गला भर आया; और वह फूट फूट कर रोने लगी।

जिस सेवा को आनन्द बाबू ने बड़े प्रेम से अभी तक रक्खा था, और कृपा करके उसे हीरक के यहाँ ले आये थे; उसकी इस तरह अवस्था देख कर उनका भी गला भर आया, और आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। उन्हें हीरक पर बड़ा क्रोध आया; और सेवा की पति-भक्ति से उनका हृदय गद्गद् हो गया। उन्होंने एक दीर्घ निश्वास लेकर सेवा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, बेटी! सुमति ने एकाएक तुझे हीरक के हाथ में देकर अच्छा न किया। गौरी को प्राप्त करने के लिये महादेव को भी तपस्या करनी पड़ी थी! फिर अनायास ही प्राप्त हुई वस्तु का मूल्य नहीं जाना जा सकता। स्वर्ग में रहने वाले को उसमें कोई विशेषता नहीं मालूम होती। तेरे चले जाने पर हीरक को तेरे गुण मालूम होंगे, जिस तरह आज वह तुझ से चिढ़ा हुआ है, उसी तरह तेरे विलाप में रोवेगा।

अच्छा बेटी! आज मेरे साथ चलकर कुछ दिन फिर तेरी पुरानी फुलवाड़ी को सींच। जब हीरक को तेरा स्मरण होगा, तब चली आना। यह कहते २ आनन्द बाबू का मुख क्रोध और दुःख से लाल हो गया।

वे सेवा को साथ ले ज्यों ही सीढ़ियों पर चढ़ने लगे; कि उन्होंने हीरक को लड़खड़ाता हुआ सीढ़ियों से उतरते देखा। उसे इस प्रकार आते देख कर सेवा अपना सारा दुःख भूल गई; और दौड़कर उसे पकड़ कर गिरते २ बचाया।

धीरे २ हीरक को अपने हाथ का सहारा देकर सेवा नीचे उतारने लगी; यह देख; प्रसन्नता से आनन्द बाबू ऊपर चढ़कर अपने कमरे में चले गये।

बगीचे में जाकर हीरक ने सेवा का हाथ पकड़ कर चूमते हुए कहा; सेवा ! मेरी प्यारी सेवा !! मेरे अपराधों को क्षमा करो। आज तक मैंने तुम्हारे सरल हृदय का पता नहीं पाया था। मैं अपने दिल की कमजोरी के कारण; तुम्हारी हर एक बात को बुरी दृष्टि से देखता रहा; आज इसका मैं हार्दिक पश्चात्ताप करता हूँ। तुमने आकर मेरे नष्ट होते हुए घर को बचा लिया। तुमने माँ की; और मेरी जो सेवाएँ की; मेरी जिह्वा में कोई शब्द नहीं; कि जिनसे तुम्हारे आगे कृतज्ञता प्रकट कर सकूँ। प्यारी सेवा ! उसके बदले में मेरी एक क्षुद्र भेंट स्वीकार करो ! प्रिये ! मेरे हृदय मंदिर की आराध्य देवि का स्थान तुम ग्रहण करो। रमा की स्वर्गीय आत्मा को, मुझे दुःखित देख कर कभी शांति नहीं मिलती होगी? प्रिये ! तुम रमा की आत्मा को शांति प्रदान करो। इस निस्तब्ध एवं शांत प्रकृति के सम्मुख; इस उदय होने सूर्यदेव के सम्मुख; मैं तुम्हे अपने हृदय का सब से उच्चासन देता हूँ। प्रिये ! स्वीकार करो ! स्वीकार करो !!

सेवा मारे प्रसन्नता के गद्‌गद् होकर बोली, नाथ ! मेरे हृदय मंदिर के आराध्य देव !! मेरे प्राणेश्वर !!! मैं उसी दिन से आप को मेरा सर्व्वस्व अर्पण कर चुकी हूँ, जिस दिन माँने

मेरा हाथ आप के हाथ में दिया था। रमा, मेरी पूज्य बड़ी बहिन हैं, उनकी आत्मा को जिस तरह शांति मिलेगी, वह सब मुझे स्वीकार है। मेरे प्राण सर्वस्व ! आज आपके और मेरे बीच में सच्चा "विवाह-कुसुम" खिला है, यह देख कर मारे प्रसन्नता के मेरा हृदय गद्गद् हुआ जाता है। चलिये, इस उषःकाल के पवित्र समय में, बागीचे की सैर करें। हीरक मारे प्रसन्नता के खिल उठा, और सेवा को गले से लगा लिया !

* * * * *

हीरक और सेवा एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए धीरे २ बागीचे की सेर करने लगे।

समाप्त